क्षण भर की दुल्हन

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'



नवरत्न प्रकाशन
बीकानेर

© यादवेन्द्र शर्मा

संस्करण अक्टूबर १९६७

मूल्य रुपये ३ ५० पैसे

आवरण शांतिचन्द्र

प्रकाशक नवरत्न प्रकाशन
बीकानेर

मुद्रक सहकारी कम्पोजिंग एजेन्सी द्वारा
कुमार आर्ट्स प्रिंटिंग प्रेस
नवीन शाहदरा दिल्ली।

प्रकाशकीय

नवरत्न प्रकाशन के आधार-स्तम्भ हैं श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के आत्मीय, मित्र और सहयोगी। राजस्थानी और अन्य प्रान्तीय बन्धु।

यह निर्विवाद है कि श्री चन्द्र जी ने अपनी निरन्तर साहित्य साधना से अखिल भारतीय ख्याति अर्जित करके न केवल राजस्थान का मान बढाया है, अपितु उनकी प्रांतीय भाषाओं मे अनूदित कृतियो ने राष्ट्रभाषा का मस्तक गौरवान्वित किया है।

मैं व्यक्तिगत रूप से नवरत्न प्रकाशन के उन सहयोगियो का आभार मानती हूँ, जिन्होंने परोक्ष अपरोक्ष रूप से उसे बल दिया है। भविष्य मे भी उनके हार्दिक सहयोग की अपेक्षा है।

भाई श्री अमरनाथ शुक्ल की आभारी हूँ ही जिनके प्रयत्न के बिना इसका शीघ्र प्रकाशन सम्भव नही होता।

शान्ति भट्टाचार्य
प्रबन्धिका

मैं इतना ही कहूँगा

ये मेरी ऐतिहासिक कहानियाँ हैं। इससे पूर्व इतिहास को लेकर मेरे दो उपन्यास 'केसरिया पगड़ी' और 'खून का टीका' प्रकाशित हो चुके हैं।

कहानियाँ प्रायः राजस्थान के इतिहास से सम्बंधित हैं, जो विभिन्न श्रेष्ठ पत्रिकाओं में छप कर पाठकों द्वारा प्रशंसित हो चुकी हैं।

सभी की राय स्वागत योग्य है।

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'
साल की होली
बीकानेर

अनुक्रम



गोरू-गाडी के यात्री

रात का अँधियारा बीकानेर के मजबूत पथरीले बुर्जों, नगर की मजबूत चहारदीवारी और कच्चे पक्के मकानों एव हवेलियों से होता हुआ रामजी लुहार के गोरू-गाडी घर पर आकर ठहर गया । रामजी को आज रह रहकर अपने वे पूवज याद आ रहे थे जिनके *त्याग और बलिदान* ने एक बार मेवाड के धूप धूसरित होते हुए गौरव को पुन जागृत कर दिया था । उनकी इस घोषणा ने सुषुप्त भूयवशियों म एक नया जोश और स्फूर्ति भर दी थी कि जब तक हम चित्तौड नही जीत लेंगे तब तक चित्तौड की धरती पर अपना कदम नही रखेंगे । राणाजी की सौगन्ध हमारी सौगधें होगी और इस महती घोषणा के पश्चात ये वीर लुहार अपने घर-परिवार को गोरू-गाडी म लादकर चल पडे । अनेक

कष्टों आपदाओं और अभावों को झेलते हुए ये गाडिया लुहार जहाँ तहाँ बिखर गये।

उसी दलित वर्ग की गर्वीली सन्तान रामजी आज अपनी गाडी के नीचे सम्पूर्ण परिवार के साथ निर्जीव-सा बैठा था। पास में एक दीया जल रहा था—धीमा धीमा, हलका हलका।

उसकी पत्नी अपने नन्हे-नन्हे बच्चों को सुला चुकी थी। उसकी बड़ी लड़की अपने भाई के साथ लोहे की छुरी बनाने में निमग्न थी। धौंकनी की हवा से अंगारे तीव्र गति से जल रहे थे।

रामजी की पत्नी जेठा लाल रंग की छींट का ओढ़ना और लहंगा पहने हुए थी। उसका लहंगा १६ गज का था और उसके पाँवों में दो दो सेर की चाँदी की कड़ियाँ और आँवले आमक गहने पड़े हुए थे। कानों में चाँदी की बालियाँ थीं जिनमें पत्तियाँ लटक रही थीं। नाक में चाँदी का काँटा था। थोड़ा सा घूँघट उसने निकाल रखा था। वह घूँघट के भीतर से ही मद्धिम स्वर में बोली इस तरह मन मारकर बैठने से क्या होगा? आपने सुबह भी खाना नहीं खाया है।

'क्या करूँ पप्पू की माँ? कौर गले के नीचे से उतरता ही नहीं। बीकानेर पर शत्रु की सेना चढ़ आयी है। वीर-बाँकुरे राठौड़ और सामंत अपनी तलवारों को म्यानों में सुलाकर अफ़ीम के नशे में पड़े हैं। महाराज बादशाह की सेवा में दक्षिण की ओर गये हुए हैं। ऐसी स्थिति में मुझसे बीकानेर पर जोधपुर वालों के अत्याचार सहे देखे जाते।

उसकी पत्नी उसकी इन भारी भरकम बातों का मर्म समझ पायी। टुकुर टुकुर धुँधले प्रकाश में अपने पति के उदास मुँह को देखती रही। पति का घनी-काली दाढ़ी और मूँछें बिन सँवरी थीं। माथे की लटें बरसों से बिना धोए रूखे-सूखे थे। ज़माने में भागी और मोटी बगलबन्दी के बखें दूर अध हुए रहे थे।

गम्भीर शान्ति थी। उस शान्ति को भंग कर रही थी धौंकनी की धूँ-धूँ की आवाज़।

रामजी अपने आप में खोया हुआ था। उसका सबसे छोटा बच्चा गोरू गाडी के ऊपर सोया था। वह अप्रत्याशित रूप से रो पडा। क्षण भर के लिए उसका ध्यान भग हो गया और जेठा गाडी के नीचे से निकलकर अपने बच्चे को गोद मे लेकर रमाने लगी।

तभी शेरू न आकर खबर दी कि जोधपुर की सेना ने आज दो निर्दोष ग्रामीणो को मौत के घाट उतार दिया है। उनकी फौजें बडा अत्याचार कर रही हैं।

रामजी की नसें तन गयीं। उसके नेत्र रक्तिम हो उठे। बाजू फडक उठे। वह व्यथा से पीडित सा होकर बोला "काश आज महाराज होते! उनके होते हुए जोधपुर नरेश बीकानेर की ओर आँख नहीं उठा सकते थे। इस तरह की कायरता बीकानेर का सवनाश कर देगी।" वह अवश हो उठा। अपनी गाडी की ओर देखकर वह सोचने लगा—इसी गाडी को अपना घर ससार समझकर वह चित्तौड से चलता फिरता भटकता यहाँ आया था।

यहाँ आने के बाद रामजी पहले बीकानेर नरेश की सेना मे रहा और बाद म हथियारो के कारखाने म काय करने लगा। वष पर वष बीत गये। रामजी ने बीकानेर नरेश के नमक-पानी से अपने परिवार का पालन पोषण किया। आज उसके होते हुए जोधपुर की सेना बीकानेर की पगडी उछाल रही थी। उनके गौरव एव मयादा को रौंद रही थी। उसने सोचा कि इससे तो मर जाना अच्छा है।

एक विभीषण ने रावण-जैसे महाबली कमयोगी और महापण्डित की सोने की लका को मिटा दिया था और बीकानेर म आज कई विभीषण उत्पन्न हो गए थे। लाडणू म जोधपुर नरेश अजीतसिह जी ने बीदावत ठाकुर तर्जसिहान एव अन्य सरदारो को अपने पक्ष मे प्रलोभन देकर मिला लिया था। गोपालपुरा के कमसेन तथा बीगासर के बिहारीदास अजीत सिह जी के प्रलोभन म नहीं आये, फलस्वरूप उन्हें उसी क्षण कद कर लिया गया।

बिहारीदास ने तेजसिंहोत से कड़कती हुई आवाज में कहा था—

"गद्दार ! तू राजपूत नहीं है। अपनी मातृभूमि से दगा ! थू है तेरी रजपूताई पर। जरूर तूने किसी गोला (गुलाम) का दूध पिया है !"

इस बीच कमसेन ने अपने विश्वस्त गुप्तचर के साथ यह खबर बीकानेर भिजवा दी थी किन्तु राज्यलिप्सा में अन्धे अजीतसिंह ने रघुनाथ भण्डारी को बड़ी सेना देकर तुरन्त बीकानेर रवाना कर दिया। इस अप्रत्याशित आक्रमण ने बीकानेर की हिम्मत पस्त कर दी और जोधपुरी सेना ने बीकानेर को घेरकर उत्पात मचाना शुरू कर दिया।

बीकानेर पर आतंक छा गया। राजकुमार जोरावरसिंह भी उन दिनों बीकानेर में उपस्थित नहीं थे। ऐसी स्थिति में वहाँ खलबली मच गयी।

रामजी सुथार को यह दुखद स्थिति सहन नहीं हुई। उसे मालूम था कि शस्त्रागार में हथियारों की कमी नहीं है। ऐसी स्थिति में यदि बीकानेर के समस्त सामन्त और राजपूत युद्ध भूमि में आ डटें तो जोधपुरी सेना का सामना अच्छी तरह से किया जा सकता है।

रामजी चिन्तातुर हो उठा। उसने एक कटार बगल में छिपायी और निकल पड़ा।

बीकानेर गढ़ के रक्षक थे सांखला राजपूत। दौलतसिंह उनका सरदार था। रामजी ने उसके समक्ष जाकर निवेदन किया—"ठाकुर सा ! महाराज की गैरहाजरी में बीकानेर के शौर्य को इस तरह न मिटने दिया जाय। आप अपने भाई-बन्धुओं का आह्वान करें। उन्हें युद्ध के लिए तैयार करें। हम सब मिलकर अपने देश की रक्षा करेंगे।"

दौलतसिंह ने असमर्थता प्रकट की—"यह सम्भव नहीं है। जोधपुरी सेना का सामना अब नहीं किया जा सकता।"

वह जसनसर के उदयसिंह के पास गया। प्रार्थना की पर कोई असर नहीं हुआ। सभी बड़े सरदार या तो गुप्त रूप से जोधपुर वालों से मिल गये थे या वे ऐसी विषम स्थिति में युद्ध करना ही नहीं चाहते थे।

पराजय सम्मुख खडी थी।

रामजी हताश होकर वापिस अपने गाडी घर पर लौट आया। उसकी पत्नी जेठा अभी भी उसकी प्रतीक्षा म बठी थी। सन्नाटा और गहरा हो गया था। सभी बच्चे सो गये थे।

उसकी पत्नी ने पूछा "अब क्या होगा? कल जोधपुर वाले नगर पर जोरदार हमला करेंगे।'

रामजी ने कहा 'वीरो को साँप सूघ गया है। ये राजपूत हमेशा आपस म लडकर अपने आपको कमजोर करते आए हैं लेकिन मैं मेवाडी हूँ। मेरे पूवजो ने कभी अपनी माँ के दूध को नही लजाया है। मैं एक बार फिर अपना बलिदान करूँगा। मैं अकेला ही युद्ध करूगा।

जेठा हतप्रभ रह गयी।

बुझे हुए दीप को जलाकर उसने अपने पति को देखा। उसके नेत्रो मे खून उतर आया था।

'मैं जाते जी जोधपुर वालो को बीकानेर की ओर नही आने दूगा।"

आप पागल हो गए हैं? अकेला चना भाड नही भूनता।'

'तो क्या रामजी जीते जी अपनी माँ-बहिनो की लाज जाते देखेगा? नही नही मैं बढती हुई जोधपुरी सेना को रोकूगा और अकेला रोकूँगा।"

रामजी उसी समय एक बूढे ठाकुर रामसिंह जी के डेरे पर गया। बूढे ठाकुर का चेहरा तेजस्वी था। रामजी को वह पहचानते थे। जब रामजी ने अपना मन्तव्य उनके समक्ष प्रकट किया तब उन्होने उसे अपना अस्त्र तलवार भाला, कवच, बन्दूक और ढाल देते हुए कहा, 'तुम्हारा बलिदान नायक इन क्षत्रियो के रक्त म उबाल ला दे। एक बार भगवान राम ने मर्यादा की रक्षा की थी, आज तुम इस धरा की मर्यादा की रक्षा करना। चाहो तो मैं युद्ध भूमि म चल सकता हूँ।"

रामजी की भुजायें इस सम्मान से फडकने लगीं। उसने जोर से करणी माता की जयकार की और वहाँ से लौट आया।

बिहारीदास ने तेजसिंह से कड़कती हुई आवाज में कहा था—

"गद्दार ! तू राजपूत नहीं है। अपनी मातृभूमि से दगा ! थू है तेरी रजपूताई पर। जरूर तूने किसी गोली (गुलाम) का दूध पिया है !"

इस बीच करमसेन ने अपने विश्वस्त गुप्तचर के साथ यह खबर बीकानेर भिजवा दी थी, किन्तु राज्यलिप्सा में अन्धे अजीतसिंह ने रघुनाथ भण्डारी को बड़ी सेना देकर तुरन्त बीकानेर रवाना कर दिया। इस अप्रत्याशित आक्रमण ने बीकानेर की हिम्मत पस्त कर दी और जोधपुरी सेना ने बीकानेर को घेरकर उत्पात मचाना शुरू कर दिया।

बीकानेर पर आतंक छा गया। राजकुमार जोरावरसिंह भी उन दिनों बीकानेर में उपस्थित नहीं थे। ऐसी स्थिति में वहाँ खलबली मच गयी।

रामजी लुहार को यह दुखद स्थिति सहन नहीं हुई। उसे मालूम था कि शस्त्रागार में हथियारों की कमी नहीं है। ऐसी स्थिति में यदि बीकानेर के समस्त सामन्त और राजपूत युद्ध भूमि में आ डटें तो जोधपुरी सेना का सामना अच्छी तरह से किया जा सकता है।

रामजी चिन्तातुर हो उठा। उसने एक कटार बगल में छिपायी और निकल पड़ा।

बीकानेर गढ़ के रक्षक थे साँखला राजपूत। दौलतसिंह उनका सरदार था। रामजी ने उसके समक्ष जाकर निवेदन किया—"ठाकुर सा ! महाराज की गैरहाजरी में बीकानेर के गौरव को इस तरह न मिटने दिया जाय। आप अपने भाई-बन्धुओं का आह्वान करें। उन्हें युद्ध के लिए तैयार करें। हम सब मिलकर अपने देश की रक्षा करेंगे।"

दौलतसिंह ने असमर्थता प्रकट की "यह सम्भव नहीं है। जोधपुरी सेना का सामना अब नहीं किया जा सकता।"

वह जसरूसर के रूपसिंह के पास गया। प्रार्थना की पर कोई असर नहीं हुआ। सभी बड़े सरदार या तो गुप्त रूप से जोधपुर वालों से मिल गये थे या वे ऐसी विषम स्थिति में युद्ध करना ही नहीं चाहते थे।

पराजय सम्मुख खडी थी ।

रामजी हताश होकर वापिस अपने गाडी घर पर लौट आया । उसकी पत्नी जेठा अभी भी उसकी प्रतीक्षा में बैठी थी । सन्नाटा और गहरा हो गया था । सभी बच्चे सो गए थे ।

उसकी पत्नी ने पूछा "अब क्या होगा ? कल जोधपुर वाले नगर पर जोरदार हमला करेंगे ।

रामजी ने कहा "चोरों को सांप सूंघ गया है । ये राजपूत हमेशा आपस में लडकर अपने आपको कमजोर करते आए हैं, लेकिन मैं मेवाडी हूँ । मेरे पूर्वजों ने कभी अपनी माँ के दूध को नहीं लजाया है । मैं एक बार फिर अपना बलिदान करूँगा । मैं अकेला ही युद्ध करूंगा ।"

जेठा हतप्रभ रह गयी ।

बुझे हुए दीये को जलाकर उसने अपने पति को देखा । उसके नेत्रों में खून उतर आया था ।

"मैं जीते जी जोधपुर वालों को बीकानेर की ओर नहीं आने दूँगा ।"

' आप पागल हो गए हैं ? अकेला चना भाड नहीं भूजता ।"

' तो क्या रामजी जीते जी अपनी माँ-बहिनों की लाज जाते देखेगा ? नहीं नहीं मैं बढती हुई जोधपुरी सेना को रोकूँगा और अकेला रोकूँगा ।"

रामजी उसी समय एक बूढे ठाकुर रामसिंह जी के डेरे पर गया । बूढे ठाकुर का चेहरा तेजस्वी था । रामजी को वह पहचानते थे । जब रामजी ने अपना मन्तव्य उनके समक्ष प्रकट किया तब उन्होंने उसे अपना अश्व तलवार, भाला, कवच, बन्दूक और ढाल देते हुए कहा, "तुम्हारा बलिदान शायद इन क्षत्रियों के रक्त में उबाल ला दे । एक बार भगवान राम ने मर्यादा की रक्षा की थी, आज तुम इस धरा की मर्यादा की रक्षा करना । चाहो तो मैं युद्ध भूमि में चल सकता हूँ ।"

रामजी की भुजायें इस सम्मान से फडकने लगीं । उसने जोर से करणी माता की जयकार की और वहाँ से लौट आया ।

नगर के दरवाजे बन्द हो चुके थे।

रामसिंह जी ने ठाकुर जैतसी पड़िहार के यहाँ सन्देशा पहुँचाया। उन्होंने कहलाया, "आज एक मेवाड़ी लुहार राठौड़ों की पगड़ी को पद दलित करेगा। धिक्कार है सिंहों की सन्तान को।"

किन्तु प्रभात तक कोई भी सामन्त सरदार युद्ध के लिए तत्पर दिखाई नहीं पड़ा। रामजी ने सर्वप्रथम सूर्य की अर्चना की। उसकी पत्नी जेठा ने उसे प्रेम भरी विदाई दी। उसके छोटे-छोटे बच्चे अपने बाप को एक सेनानी के भेष में देखकर हर्ष से मचल रहे थे।

उसकी बड़ी लड़की सेवती ने आकर पूछा, "बापू लड़ाई में आपके साथ कौन होगा?"

राजभक्त रामजी ने कहा 'बेटी, वीर के साथ दो ही चीज रहती हैं—अपनी तलवार और अपने स्वामी की आन पर मिटने की साध।"

'आप कब वापस आयेंगे?

जेठा का तो जैसे कलेजा ही फट पड़ा। उसकी सिसकियाँ सुनकर सभी बच्चे सहम गये।

रामजी जेठा के समीप गया। भर्रायी आवाज में बोला 'सेवती की माँ! युद्ध में जाते हुए वीर को सिसकियाँ मत सुनाओ। मैं जिन्दा रहा तो लौट आऊँगा। यदि मर जाऊँ तो समझना कि तेरे पति ने जिसका नमक खाया, उसके नमक के हक को सचाई के साथ अदा कर दिया।'

उसका तीन वर्षीय बेटा भागा भागा आया मेरे लिए क्या लाओगे?'

'शत्रुओं के सिर।"

वह खुशी से तालियाँ बजाने लगा।

रामजी ने घोड़े पर सवार होने के पहले एक बार अपनी गोरु-गाड़ी के घर को देखा। फूल से नन्हे-नन्हे बच्चों को देखा। घूँघट में लिपटी पत्नी को देखा। फिर फुर्ती से 'जय एकलिंग', 'जय माता जी' के नारे लगाते हुए प्रस्थान कर गया।

जैसे ही किले के आगे से गुजरा वैसे ही चन्द सैनिकों ने उससे पूछा

"कहाँ जा रहे हो भाई ?"

वह कठोर स्वर में बोला, "बीकानेर के क्षत्रिय अपनी माँ धरती की इज्जत नहीं रख पा रहे हैं, इसलिए एक लुहार उसकी रक्षा के लिए अकेला ही लड़ने जा रहा है ?"

उसने एक मिरासी को बुलाया, उसे नगाड़ा बजाने को कहा। मिरासी नगाड़ा बजाता हुआ उसके आगे आगे चलने लगा। वह हर व्यक्ति से उपयुक्त शब्द कहता हुआ चल रहा था।

वह जान हथेली पर रखे चल रहा था। जालीदार खिड़की में खड़ी भूकरका के ठाकुर पृथ्वीराज की पत्नी ने रामजी की घोषणा सुनी। उसकी नसों का खून उबल पड़ा। वह अपने पति के सामने गयी। अफीम के नशे में चूर अपने पति को ललकारा और फटकार सुनाई। मलसीसर के ठाकुर हिंदसिंह की शक्ति को ताने दिए गए पर वे भी मरणासन्न से पड़े रहे।

नगर का द्वार बन्द था। वहाँ चन्द सैनिक तैनात थे। उनकी दृष्टि सन धूल भरे बादलों पर लगी हुई थी जो जोधपुरी सेना के आने की सूचना दे रहे थे। सैनिकों के पास कुछ बन्दूकें थीं। रामजी ने अपनी बन्दूक सँभाली।

उसने द्वारपाल से निवेदन किया, "दरवाजा खोल दो। मैं युद्ध भूमि में जाना चाहता हूँ।"

"अकेले ? '

"हाँ।"

' क्यों ?"

"क्योंकि राठौरों ने चूड़ियाँ पहन ली हैं। उनके रक्त में गरत नहीं, गद्दारी घुस गयी है। वे लालच म पड़कर उस मिट्टी को बेचने के लिए तयार हैं जिस मिट्टी ने उन्ह पदा किया है।"

"क्या बकते हो ?" एक सनिक भल्लाया।

"ठीक कह रहा हूँ, वरना आज बीकानेर की ओर शत्रु सेना इस

तरह बढ़ती चली आती ? आज सब दाजुओं से मिल गए हैं । महाराज यहां नहीं हैं । महाराज कुंवर भी बाहर गए हुए हैं । ऐसी स्थिति में हमारा क्या कर्तव्य हो सकता है ? अपने देश पर हमने हंसते बलिदान हो जाना । और आप '

पहरेदार बोला—'हम गद्दार नहीं हैं । '

' फिर रणभेरी बजाओ, तुरही की गूंज से आकाश हिला दो । मैं अकेला इस किले की रक्षा करूंगा । मैं जीते जी इस चहार-दीवारी में शत्रुओं को घुसने नहीं दूंगा । आप मेरा विश्वास करें । '

पहरेदार ने जोश में दरवाजा खोल दिया । दरवाजे के रुआब सैनिकों ने रणभेरी के नाद से दिग दिगंत को गुंजा दिया ।

"एक लुहार जोधपुरी फौज से अकेला लड़ेगा । सामंत ठाकुरों, सरदारों के लिए डूब मरने की बात है ।" बस यही चर्चा, यही बात । ठकुरानियों ने चूड़ियां और लहंगे ला लाकर अपने पतियों के आगे रख दिए । राजपूती रक्त खौल उठा । मुकरबा के ठाकुर पृथ्वीराज और मल सीसर के हिम्मतसिंह ने बागडोर संभाली । वे वीरों को एकत्रित करने लगे ।

तब तक जोधपुरी सेना चहारदीवारी के नजदीक आ गई थी । रामजी पर तो जैसे उन्माद छा गया । जब रघुनाथ भंडारी ने अपनी सज्जित सेना को रोक कर दरवाजे की ओर देखा तो वह विस्मित रह गया । एक अकेला सिपाही खड़ा था ।

भंडारी ने सावधान होकर अपनी सेना से कहा, 'कोई आगे न बढ़े । वार करने के पहले मेरी आज्ञा की प्रतीक्षा करें । ' और उसने रामजी को ललकारा—"खैर चाहते हो तो अपने आप को हमारे हवाले करदो । हम तुम्हें क्षमा कर देंगे । '

रामजी ने ललकार कर कहा, ' बेहतर यही होगा कि आप जिस पांव आये हैं उसी पांव लौट जायें वरना आज कोई जीवित नहीं बचेगा ।"

भंडारी ने पुनः कहा क्यों अकेले अपनी जान गंवा रहे हो ?

रामजी गरजकर बोला 'कौन अकेला है? मेरे पीछे हजारों लोग हैं ।

भंडारी ने अपने सैनिकों को आगे बढ़ने के लिए कहा। रामजी के सिद्धहस्त हाथों ने बंदूक संभाली और फायर करने शुरू किए। उसने एक बड़ी शिला के पीछे अपना मोर्चा लगाया। पर जोधपुरी सेना ने उसे थोड़ी देर में घेर लिया। उसकी बंदूक शत्रु की गोली से टूट गयी। तब वह अपनी तलवार लेकर उन पर टूट पड़ा। उसने कई शत्रुओं को आहत व धराशायी किया। अंत में वह निर्दयतापूर्वक कत्ल कर दिया गया। उसका सिर धड़ से अलग एक कोने में लुढ़क गया। एक साथ इतनी तलवारें पड़ीं कि शरीर के टुकड़े टुकड़े हो गए।

द्वार रक्षकों का खून खौल उठा। वे मोर्चा लगा कर डट गए। दो वफादार पडिहार सैनिकों ने पृथ्वीराज एवं हिम्मतसिंह को जाकर यह किस्सा सुनाया। सोये सिंह लुहार के बलिदान से जाग उठे जैसे उस लुहार की मौत ने उनके मुंह पर तमाचा जड़ दिया हो। घर घर अकेले लुहार के बलिदान की गाथा के गीत गूंज उठे। राजपूत घरों के बाहर निकल आए। सांझ का युद्ध बंद रहा। सुबह की पहली किरण के साथ ही बीकानेर की फौज ने पृथ्वीराज एवं हिम्मतसिंह के सेनापतित्व में जोधपुर की सेना पर हमला बोल दिया। जोधपुर की सेना में खलबली मच गयी। बीकानेर के लोग भयंकर रूप से लड़े। लग रहा था, हर अकेला राजपूत रामजी लुहार है।

जोधपुरी सेना के पांव उखड़ने लगे। पराजय के भय से भंडारी बीकानेर वालों से संधि कर लौट पड़ा।

रण क्षेत्र में ढेरों सिर एवं धड़ पड़े थे। लोग अपने अपने सम्बन्धियों की लाशें खोज रहे थे।

एकायक चंपू और शेरू नजर आए। दोनों नंगे पांव रामजी की लाश ढूंढ रहे थे। क्षत विक्षत लाशों को देखकर चंपू कांप रहा था। कभी कभी चीख उठता था। शेरू उसे साहस बंधाता था।

एकाएक चंपू ने कहा, "वह रहा बापू का सिर।"

फिर दोनों ने सिर को एक कपड़े में बांधा और घर चले आए।

परम्परा को उसी मान मर्यादा से निभा रहा था। यवन हैरान हो गए थे। भाटी राजपूतों को विजय करना अब उनके वश का रोग नहीं रहा, पर खिलजी तो बड़े हठी थे और उनके इरादे अटल थे।

वह बार-बार फरमान भेजता था—खिलजी ने निरस्त्र होकर लौटना नहीं सीखा। उसके हुक्म की तामील होनी ही चाहिए। अपने आप को वर्षों करो या दुश्मनों का नस्तनाबूद।

उसकी इस आज्ञा का पालन करने के लिए महबूब खाँ अली खाँ फराद खाँ और काफूर वर्षों से जसलमेर में डटे हुए थे।

काफूर अत्यंत वीर और कुशल राजनीतिज्ञ था, पर साथ ही धर्म परायण और सच्चा भी। उसमें नैतिकता की और नतिकता के साथ वचनों के पालन की क्षमता।

जब महारावल मूलराज के भाई रतनसिंह जी ने एक बार अप्रत्याशित आक्रमण किया और काफूर के प्राणों पर आ बनी, तब काफूर ने उनसे अभयदान माँगा। रतनसिंह जी ने विवश काफूर को प्राणदान देते हुए कहा—'हम क्षत्रिय विवश शत्रु पर वार नहीं करते। सेनापतिजी आप खुशी से अपने डेरे पर जा सकते हैं।

काफूर इस अभयदान पर पिघल गया। रतनसिंह जी को प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध करता हुआ, विगलित स्वर में वह बोला—"इस अहसान का बदला मैं जिन्दगी में नहीं चुका सकता, फिर भी आपसे वायदा करता हूँ कि फर्ज के अलावा आप जब कभी इस नाचीज से कुछ भी मागेंगे वह खुशी खुशी देगा। मौका पड़ने पर अपनी जान तक कुर्बान कर देगा।

इस घटना के बाद काफूर और रतनसिंह जी में गहरी दोस्ती हो गई। जब जब युद्ध बन्द होता तब-तब रतनसिंह जी किले की दीवार की बुर्जियों में रस्सी की सीढ़ी लटका कर आ जाते और दोनों मित्र घंटों वार्तालाप करते।

आज भी ऐसा ही हुआ। अंधकार के बढ़ते-बढ़ते रतनसिंह जी काफूर

के शिविर म आ गए। मशालोकी रोशनी म शराब के जाम उठने लगे। रतनसिह जी शराब की जगह कसूम्बा पीते थे। उनके लिए अफीम को घोलकर कसूम्बा बनाया जाता था।

दोनो दोस्त चौपड और शतरज के खेला म निमग्न हो जाते। राज नीति की कोई चर्चा नही होती। चर्चा करने पर जसे एक तरह का प्रतिबन्ध ही था। घर बार, गहस्थ और नितान्त व्यक्तिगत चर्चाएँ ही उनके बीच होती थी।

परन्तु फरीद खा दुष्ट प्रकृति का था। दोनो के बीच आकर विषाक्त वातावरण की सजना किए बिना नही रहता था। अपनी चगेज मूछा पर हाथ फेरता हुआ, वह शिविर म आता। उसके काले भद्दे होठो पर कुटिल मुसकान रहती। आकर वह पूछता—"कौन किसको मात दे रहा है ?"

काफूर शतरज की मोहरो पर अपनी नजर जमाए हुए कहता—"अभी तक तो छोटे रावल ही मात द रह है।"

"इतने सालो से इनसे मात खाना ठीक नही है मियाँ।

बात का तात्पय समझकर रतनसिह जी तुरन्त अपनी मूछा पर ताव देकर कहत— 'पाच दिन पहले तो आपका खजाना लूट लिया गया था। अपने आलीजहा को लिख दीजिएगा कि जसलमेर का किला न आज फतह होगा न कल। भाटी राजपूतो के गौरव की गरिमा को आसानी से नही मिटाया जा सकता।"

फरीद खाँ स्तब्ध रह जाता। इतनी रसद ये लोग कहाँ से लाते है ? क्या इतने अखड भडार किले म हैं ? और समय गुजरता जाता। फिर आक्रमण होते। यवन अपनी समस्त शक्ति, रण-कौशल और साहस के साथ आक्रमण करते, पर प्रतिरोध मे भाटी वीर उन्हें ऐसा मुँह-तोड जवाब देते कि उनको लेने के-देने पड जाते। अजेय दुग अजेय ही बना रहता।

फिर कुछ दिनो के युद्ध के पश्चात विराम। पूण शान्ति।

इस तरह पूरे बारह वर्ष बीत गए। भाटी राजपूत 'दुर्ग' यवनों की किले के बाहर छिपे रूप से रसद लूटता रहता। यवन सेना के समक्ष अब रसद की समस्या खड़ी होने लगी। महबूब खाँ विचलित हो गया। उसने काफी सोच विचार कर लौटना ही बहतर समझा।

शिविर में गुप्त मंत्रणा हुई। सारे सेनापति एकत्र हुए।

महबूब खाँ ने निराशा से कहा—"अब मुमकिन नहीं कि हम महारावल को शिकस्त दे सकें। अब हमारा लौटना ही बेहतर रहेगा।"

काफूर ने उसकी बात का समर्थन किया—"एक छोटी-सी बात को लेकर फौज की इस तरह तबाही कराना ज्यादा ठीक नहीं है। आलमपनाह जिद्दी हैं। जो बात पकड़ लेते हैं उसे छोड़ते ही नहीं। इधर जैसलमेर और उधर चित्तौड़।'

फरीद खाँ ने व्यंग्य मिश्रित स्वर में कहा— आप बादशाह सलामत को जिद्दी कैसे नहीं कहेंगे ? महारावल मूलराज के छोटे भाई रतनसिंह आप के दोस्त जो ठहरे और आप तब मेरी एक बात का जवाब देंगे ? क्या इतने सालों के बाद कोई फैसला किए बिना लौटना हम सब के लिए डूब मरने की बात नहीं ? क्या मुँह लेकर हम आलमपनाह के सामने जाएंगे ?

अली खाँ बड़ी ही गम्भीर प्रकृति का था। उसने भी फरीद खाँ की इस बात का समर्थन किया। वह बोला— इस किले की हिफाजत ऐसे बहादुर कर रहे हैं जो मौत को मजाक समझते हैं। अब हम किले का राज जाने बिना उस कदापि फतह नहीं कर सकते।

फरीद खाँ ने उत्साह से कहा— खाँ साहब फरीद ने यह इन्तजाम भी कर लिया है। मैंने भीमसिंह भाटी सरदार को अपने में मिला लिया है। वह कल तक मुमकिन है किले का सारा राज लेकर आ जाएगा।'

काफूर के मस्तिष्क पर जैसे किसी ने हथौड़ा मार दिया हो। वह प्रश्नवाचक दृष्टि से फरीद खाँ को देखने लगा। फरीद खाँ ने भौंहें टेढ़ी करके कहा—'काफूर भाईजान यह राज राज ही रहे। नमकहरामी

वफादार लाग नही करते।"

"आप बेफिक्र रहे। यह राज राज ही रहेगा।'

और रात को जब रतनसिंह जी उससे मिलने के लिए आए तब वह अपने साथ अपने दोनो बेटो को भी लाए। घड़सी और कान्हड़ को सम्बोधन करके रावल ने कहा—"अपने चाचा को प्रणाम करो। दोनो बेटो ने काफूर को प्रणाम किया। काफूर ने उन्हे अपने गले से लगाते हुए कहा— आओ बेटो, तुम लोगो की क्या खातिर-तवज्जो करूँ ?"

"इनकी हिफाजत अब आपको करनी है। काफूर भैया, इन्हे मैं आपके हवाले करके जा रहा हूँ क्योकि भीमसिंह भाटी आपके सिपाहियो को किले का भेद देने के लिए आ पहुचा है। हम चाहे बचें न बचें, पर आपको इन बच्चो की देख भाल करनी होगी। दोस्त! ये मेरी अमानत है। इनकी रक्षा करना आपका धर्म है।"

काफूर ने उन दोनो को अपने वक्ष मे समेट लिया। दृढता से वह बोला—' मैं अपने ही बच्चो की तरह इन दोनो को रखूगा। मेरे जीते जी इनका कोई बाल भी बाँका नही कर सकता।"

'मुझे ऐसी ही उम्मीद है। अच्छा अब मैं चला। अब हमारी मुलाकात युद्ध भूमि म ही होगी।

दोनो ने अश्रु भरी विदाई ली।

फरीद खाँ शिविर म आया तो उसन उन लड़को को देखा। वह काफूर से बोला—' इन काफिरो को तुम दूध पिलाकर बड़ा करोगे ?'

'कौन काफिर है ? य बेगुनाह लडक ? फरीद खाँ! फर्ज के हद से मैं नही गुजरूँगा, पर इन्सानियत स भी नही गिरूँगा। जानते हो, रावल मेरा दोस्त है एक बार उसने मुझे जान बख्शी थी, उसके बदले का वक्त आज ही आया है। समझे!"

वह दोनो लड़को को भीतर ले गया।

रात जसे रुक रुक कर गुजर रही थी।

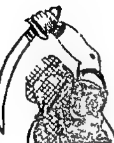
जसलमेर के वीर जान गए थे कि भीमसिंह भाटी, जो गत तीन दिन

इनाम ! जलील कुत्ते देख इस आग को। इस आग में तेरी बीवी भी होगी तेरा बच्चा भी होगा। तू हवस का गुलाम है। तूने कभी यह नहीं सोचा कि इतनी बर्बादी के बाद क्या बचेगा ? मुझे नफरत है ऐसे इन्सानों से। बहादुर हैं ये लोग, जो अपने मादरेवतन पर हँसते हँसते मिट जाते हैं। सिपाहियो ! इस जलील इन्सान को इस आग में झोंक दो। जो अपनी माँ का नहीं हुआ, वह पराया का कैसे होगा ?"

भीमसिंह चीखता चिल्लाता अभय माँगता रहा पर काफूर ने उसे आग में झोंक दिया।

फिर वह चुपचाप टूट कर बैठ गया। उस सूने और निर्जन किले को देखता रहा और फिर सिसक पड़ा। मन-ही मन प्रतिज्ञा करता हुआ बोला—"दोस्त रतन ! मैं फर्ज में बँधा था फिर भी आपके दोनों लड़कों को हिफाजत से रखूँगा। वे दोनों अब मेरी अमानत हैं और एक दिन उन्हें इसी किले का स्वामी बनाऊँगा।"

और समय आने पर घड़सी जैसलमेर का महारावल बना !



मैं बूँदी नहीं दूँगा

' मैं बूँदी नही दूंगा । कुम्भा बैरसी ने भीम-गर्जना की, 'चाहे बूँदी असली हो या नकली । बूँदी नाम की रक्षा करना मेरा धर्म और वशीय गौरव है ।''

रात्रि का तिमिराचल ससृति पर छा गया था । आकाश तारो से जगमगाने लगा था । कुम्भा बैरसी अपने शयनकक्ष मे व्यग्रता से चहल-कदमी कर रहा था । रजत दीवट पर इत्र का दीया जल रहा था । उसकी सुवास से कक्ष सुगंधित था । गवाक्षो के रेशमी पर्दों पर जड़े हुए सलमे सितारे काँपते हुए प्रकाश से झलमला रहे थे ।

उसकी पत्नी इस गर्जना से सहम गयी । वह निस्पन्द-सी हो गयी । उसके मदरीले नयनो मे प्रश्न नाच उठा । कुछ बोलना चाहती थी, पर बोल नहीं पायी ।

'आप ठकुराणी सा, इस तरह स्तब्ध खडी हैं, इसे मैं समझ रहा हूँ। किन्तु मैं आपको भी स्पष्ट रूप से बता देना चाहता हूँ कि मैं बूंदी नही दूगा कदापि नही दूगा।'

ठकुराणी उसके थोडे निकट आयी। उसके पांवो की पैंजनियां धीरे धीरे बजकर शात हो गयी। अपने कांपते हुए स्वामी की भुजा का मदुल स्पर्श करके वह मन्द स्वर मे बोली, आप व्यर्थ उत्तेजित मत होइए। बूंदी का कौन ले सकता है? आज स दो दिन पूर्व सिसोदिया वीर हाडा सरदारो से पराजित होकर आये हैं। बूंदी नरेश वीरसिंह ने स्वय राणा लाखा जी की भग भवानी को खडित किया है।

हाडा वीर कुम्भा वैरसी शय्या के पास गये। पल भर के लिए उनकी दृष्टि शय्या पर बिछे मखमली गद्दो पर गयी। पलग के चाँदी के पाये चमक रहे थे। पायों का निचला हिस्सा सिंह की शक्ल का था। वे श्रम से उस पर बठ गये। गहरी सास ली। अपनी बाँकडली मूछो पर ताव दिया। पूर्ववत स्वर मे किंचित मन्द स्वर मे बोले 'यही पश्चाताप राणा जी और उनके सामन्त योद्धाओ को सता रहा है। अपनी पराजय व अपमान की आग वे मेरे रक्त-गव और वशीय गौरव को मिटाकर ठडा करना चाहते हैं यह मैं कदापि नही होने दूगा। मै भी हाडा राजपूत हूँ मेरे शोणित मे भी क्षत्रिय रक्त दौड रहा है।

लेकिन मैं आपकी बात का तात्पय नही समझी। ठकुराणी उनके समीप बठ गयी। श्वेत मलमल की बगलबन्दी पसीने स भीग गयी थी। उसने दासी को आवाज दी। दासी तुरन्त नतमस्तक होकर उपस्थित हुइ। ठाकुर सा को पखा झलो।' आज्ञा दी ठकुराणी ने।

दासी पल भर मे मोर के पखो का बना पखा ले आयी जिसकी मूठ चाँदी की थी। वह तीव्र गति से पखा करने लगी। कक्ष म इस बीच गहरी निस्तब्धता छायी हुई थी। कोई भी नही बोल रहा था।

ठकुराणी उठी। सहानुभूति पूर्ण स्वर मे बोली 'बिना बात के आप इतने व्यग्र और आवेश म आ जाते हैं। उसने अपने आँचल से कुम्भा

वरसी के मुख पर उभरे स्वेद-कणो को पोछा। पत्नी के इतने अनुराग मदुल स्पश से कुम्भा को एक अलौकिक सन्तोष मिला। अपनी आन्तरिक विकलता को दीघ नि श्वास द्वारा निकालकर व बोले, 'ठकुराणी सा। आप यह भली भाति जानती हैं कि परसो के युद्ध मे मेवाड बूदी से पराजित हो गया है। बूदी के निकट गाँव निम्बेड में दोनों सेनाओ के बीच घमासान युद्ध हुआ। सहस्र सूयवंशी युद्ध पिपासुओं के समक्ष मुट्ठी भर हाडा सरदारो ने केसरिया पहनकर सामना किया। सभी कहते हैं कि विजय सत्य की होती है। असत्य पर लडा युद्ध उचित नही। हालाकि राणा लाखा जी के पास बूँदी से लडने का कोई ठोस आधार नही था, फिर भी उन्होने अपनी विस्तारवादी नीति का पोषण करने के लिए हाडाराव वीरसिंह जी को एक हिन पत्र लिखकर यह माँग की कि उन्हे चित्तौड की पराधीनता स्वीकार कर लनी चाहिए। उनकी एक और माँग है कि उन्होंने जिन ग्रामो पर अधिकार किया है वे चित्तौड के हैं।"

"क्या यह सच है?' ठकुराणी ने प्रश्न किया।

"नही। जो गाँव आज बूदी का गौरव बढ़ा रहे हैं, उन्ह हाडा वीरो ने तलवार के जोर से मीणा से जीता है। उन्हें इस तरह की धौंस पर कसे दिया जा सकता है। मीणो से युद्ध करना कोई बच्चो का खेल नही। सो हाडा नरेश वीर सिंह ने उन ग्रामो को देने से सवथा अस्वीकार कर दिया। परिणाम स्वरूप राणा लाखा ने बूदी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। विजय सत्य की होती है। हाडाओ ने अपने मुट्ठी भर योद्धाओ के साथ राणा के छक्के छुडा दिये। स्वय वीरसिंह ने राणा लाखा को युद्ध भूमि म ललकारा। सुनते हैं, बिजलियों की भाँति चमकती दोनो की तलवारें टकरायी। किन्तु हाडो के उस अप्रत्याशित आक्रमण को मेवाडी नही रोक सके। वे भाग खडे हुए।—इस लज्जाजनक पराजय और अपमान को राणा जी नही सह सके। उन्होने चित्तौड पहुँचते-पहुचते एक भयानक प्रतिज्ञा कर ली।'

कुम्भा वरसी शात हो गये। उनके नेत्रो के स्फुलिंग कुछ क्षणो के

लिए बुझ गये । उन्होंने पलकें मूद लीं । ठकुराणी की उत्सुकता बढ़ती गयी । उसने चादी की भारी से सोन के गिलास मे पानी भरा। कुम्भा बरसी को विनीत स्वर मे ठकुराणी ने कहा "ठाकुर सा ! जल मरोगिये ।"

ठाकुर ने जल पिया । गिलास को वापस लेते हुए ठकुराणी ने फिर पूछा "राणा जी ने कौन सी प्रतिज्ञा की है ।'

'उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि जब तक मैं बूदी को नही ले लूगा तब तक अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगा ।

ठकुराणा आश्चर्य-चकित सी कुम्भा बरसी की ओर देखने लगी। सहमती-सी बोली 'इतनी कठोर प्रतिज्ञा ? '

'हा ठकुराणी, इतनी कठोर प्रतिज्ञा की है हमारे राणा जी ने । और जानती हैं आप यह प्रतिज्ञा पूर्ण होते होते महीना लग जायेंगे और राणा जी भूख और प्यास से तडप-तडप कर अपना दम तोड देंगे ।

'हे राम ! हठात ठकुराणी के मुख से ये शब्द उच्चारित हुए और वह गम्भीर हो गयी ।

कुम्भा बैरसी के समक्ष की दीवार पर एक ढाल के दोनों ओर तलवारें लटक रही थी । दायी ओर की दीवार पर कई सिंहो व भालुओ की खालें थी । कुम्भा बरसी शिकार मे बहुत ही शौकीन थे और सिंह को मारने मे सिद्धहस्त गिने जाते थे । वे उठे एक सिंह के मुख पर हाथ रखकर वे बोले "यह प्रतिज्ञा हाडाराव व उनके स्वामिभक्त सरदार शीघ्र जी सहजता व शीघ्रता से पूरी नही होने देंगे ।—ठकुराणी सा ! हाडो ने स्थान-स्थान पर अपनी किलेबन्दी को बहुत ही सुव्यवस्थित और मजबूत बना लिया है । उनके यशस्वी व नीतिज्ञ सेनापतियो ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि वे बूंदी प्राप्त करने की सोचें तो महीना बीत जायेंगे ।

फिर राणा ?'

सूर्यवंशियो की प्रतिज्ञा बच्चा का खेल बन गयी है । लेकिन ठकुराणी सा ! यह बच्चो का खेल उन्हे बहुत महँगा पड़ेगा ।

कुम्भा वैरसी ने फिर धीरे धीरे बताया, "ठकुराणी सा ! राणा जी ने अपनी पराजय को विजय मे बदलने के लिए यह निश्चय किया है कि एक कृत्रिम बूदी का निर्माण हो। चित्तौड के नीचे एक मिट्टी की बूदी बन रही है। वैसा ही किला बन रहा है। राणा जी उस बूदी को ध्वस करके अपनी प्रतिज्ञा पूरी करेंगे तथा उसकी रक्षा का भार हमे सौंपा जायेगा। और ठकुराणी सा, हमारी रगो मे हाडा वश का गौरवशाली रक्त है, हम सिसोदिया राजपूतो का अपने समक्ष बूंदी का विनाश करते नही देख सकते चाहे वह बूदी कृत्रिम ही क्यो न हो ?'

कुम्भा वैरसी गत कई वर्षों से राणा जी की हाडा राजपूत सेना के सरदार थे। अपनी वीरता और शूरता के लिए वह दूर दूर तक प्रसिद्ध थे। किसी कारण हाडाओ से रुष्ट होकर वे राणा जी की सेवा मे आए थे। किन्तु राणा जी की सेवा मे आने के पूर्व उन्होंने स्पष्ट रूप से कह दिया था, जहाँ आपका पसीना बहेगा वहाँ हम अपना रक्त बहायेंगे। हम आपके एक सकेत पर अपना सर्वस्व विसर्जन कर देंगे, किन्तु हम कभी भी अपनी तलवार को हाडों के विरुद्ध नहीं उठायेंगे। हम कभी भी उन युद्धो में सम्मिलित नही होंगे जो हाडा वश व उनकी मातभूमि से सम्बधित होंगे हम कभी भी अपनी आँखो के समक्ष किसी हाडा राजपूत का अपमान होने नही देंगे।

किन्तु आज जब कुम्भा वैरसी शिकार करके लौटे तब उनके समक्ष एकलिंग दीवाण राणा लाखा का सन्देश पहुचा। कुम्भा वैरसी एक सिंह को मारकर लाये थे। बहुत ही थक चुके थे। बडे जोर की प्यास लगी हुई थी। उनकी इच्छा थी कि तन और मन की थकान मिटाने के लिए एक प्याली कसूम्बा की पी जाय।

अपने अश्व से उतरते ही ड्योढीदार ने राणा जी का सन्देश थमा दिया। वे उसी पाँव पुन अश्वारूढ होकर राणा जी के दरबार में पहुच। बडे-बडे सामन्त, उमराव सरदार और दीवान जी बैठे थे। कुम्भा वैरसी का सबने खडे होकर अभिनन्दन किया। राणा जी से मुजरा करके वे

अपने पदानुसार प्रदत्त सिंहासन पर बठ गये।

दीवाण जी ने एकलिंग की अभ्यर्थना करके कहा, "सरदारो ! राणा जी ने जो प्रतिज्ञा की है उसको सभी जानते ही हैं। प्रतिज्ञा इतनी कठोर है जिससे मेवाड भयानक परिणाम से टकरा सकता है। तात्पर्य स्पष्ट है कि जब तक बूंदी का किला विजयी नही होगा तब तक राणा जी अन्न जल ग्रहण नही करेंगे और यह सहज सम्भव नही है। अत यह निश्चय किया गया है कि एक मिट्टी की बूंदी बनायी जाय और उसे सिसोदिया द्वारा विध्वंस कराया जाय। इस तरह प्रतिज्ञा पूर्ण करके किसी भी तरह वर्तमान सकट को टाला जाय। अतएव हम सबने देश और राणा जी के हित को सोचकर यह निश्चय किया है कि इस कृत्रिम बूंदी दुर्ग की रक्षा का भार हाडा वीर कुम्भा वैरसी को सौंपा जाय। सीसोदियों के आक्रमण पर वे हट जायेंगे और कृत्रिम बूंदी को विनष्ट कर दिया जायेगा। इस तरह यह सकट टल जायगा।'

कुम्भा वरसी एकदम खडे हो गये। उनका हाथ अपनी तलवार पर चला गया किन्तु दरबार की मर्यादा का ध्यान रखकर वे पुन बैठ गये।

सेनापति ने कुम्भा वरसी के रौद्र रूप को देखा। शकित हो उठा। फिर वह दीवाण जी को बठने का सकेत करके बोला हम जानते हैं कि इस बात से कुम्भा जी के आत्माभिमान पर ठेस पहुंचेगी पर राणा जी के जीवन और अपनी स्वामिभक्ति की रक्षा के लिए व इस मानना का सहर्ष पालन करेंगे। उन्हें विश्वास होना चाहिए कि यह सब विवशता के कारण हो रहा है।'

कुम्भा वरसी अधिक नही रुके। वे दरबार म सिर झुका कर खडे हुए और राणा जी के समक्ष बोले, हम आपकी आज्ञा का पालन करेंगे।"

अपने डेरे लौटते ही उन्होंने कसूम्बे की प्याली पी पर उनके मन की चाचलता और व्यग्रता बढ़ती गयी। सीसोदिया उनके गौरव को लल कार रहे हैं। उन्होंने नाद किया 'मैं बूंदी नही दूगा कदापि नही दूगा।'

रात्रि का मौन अब उनके डरे की दीवारो कगूरो व बुर्जों पर आकर

बैठ गया। रात उनकी आँखों में गुजरने लगी। उन्हें लगा कि यह रात कितनी विकट और अधीर है ? हर क्षण उन्मत्त और ठहरा हुआ ! कुंभा जी ने अपनी रानी से अनेक सुख और दुख की बातें की। उनका पुत्र पालने में झूल रहा था। कुम्भा जी उसे स्नेह भरी विगलित दृष्टि से देखते रहे।

ठकुराणी ने प्रार्थना की 'आप थोड़ी देर विश्राम कर लीजिए प्रभात होते ही आपको युद्ध भूमि में जाना है।

"ठकुराणी!" स्नेहिल स्वर में बोले कुम्भा जी, 'मुझे लगता है हमारे जीवन की यह सर्वश्रेष्ठ और महान रात है। अब दूसरी रात हमारे जीवन में नहीं आयेगी।

"नहीं नहीं, ऐसे अशुभ अपूत बोल मत बोलिये। मेरा सिंदूर सुहाग इतना फीका नहीं है।

कुम्भा वरसी धीरे से मुसकराये। बोले, रानी सा! क्षत्राणी का सिन्दूर केवल सिन्दूर नहीं होता वह रक्त सिन्दूर होता है। हर वीर-त्यागी क्षत्राणी ने अपनी अन्तिम माँग शोणित से भरी है। मैं निश्चित रूप से कह रहा हूँ कि मैं जीते जी बूंदी नहीं दूंगा। (हाडा राजपूत यह अपमान नहीं सह सकेगा। और इस अपमान को रोकने के लिए उसे उत्सर्ग होना ही पड़ेगा।'

कुम्भा जी शय्या पर अधशायित हो गये। उनके कानों में पहने हुए मोती चमक रहे थे। ठकुराणी थोड़ी देर तक उन्हें देखती रहीं। बाद में चरणों को धीरे धीरे दबाती हुई बोली "मुझे तनिक भी दुख नहीं है। क्षत्राणी के लिए श्रेष्ठ महान पर्व ही उस दिन होता है जब उसका पति युद्ध को जाता है। किन्तु ।'

'किन्तु क्या ?"

'देखिए अपने कुंवर को। कल आप नहीं होंगे और मुझसे यह पूछेगा कि मेरे पिता जी कहाँ हैं तब मैं क्या उत्तर दूंगी ?"

"उसे मेरी ढाल, तलवार और पगड़ी दिखाकर कहिएगा, तुम्हारे पिता

जी न इस पगड़ी की रक्षा के लिए इन दो शस्त्रों से सज्जित होकर प्राण त्याग दिए।

ठकुराणी सिसक पड़ी। अपने पति का निश्चित मृत्यु को जानकर उसका हृदय विदीर्ण होने लगा। उसका ध्यान सहसा अपनी हाथों की चूड़ियों पर चला गया। वह उन्हें देखती रही। उसकी आँखों से अश्रुओं की अविरल धारा प्रवाहित होती रही।

अपनी पत्नी को अपने वक्ष में छिपाते हुए कुम्भा जी ने विगलित स्वर में कहा मृत्यु वीरों के लिए त्यौहार होता है ठकुराणी सा! जो क्षण मृत्यु के लिए निश्चित है वह आयगा ही। हमें यह मानकर धैर्य रखना चाहिए कि कल विधि ने हमारा मृत्यु दिवस निश्चित किया है लेकिन हमारी मृत्यु से आप विचलित मत होइएगा। यह फूल सा कुंवर कल बड़ा होगा इसे भी यही स्मरण दिलाती रहियेगा कि अपनी मातृभूमि की रक्षा करना और अपने देश उसकी मिट्टी और उसकी आन शान की रक्षा करना। किसी मूल्य और प्रलोभन में अपने गौरव का मोल न करना।

ठकुराणी सिसकती रही। कुम्भा जी उसे सहलाते रहे। कब रात अपनी तारों भरी चूनड़ी समेटकर चली गयी यह उन दोनों ने तभी जाना जब मन्दिर की पवित्र घण्टा ध्वनियों ने उद्बोधन की झंकार की।

× ^ ×

कुम्भा वरमा ने अपने अधीन समस्त हाड़ा सरदारों को एकत्रित किया। उन्हें सारी स्थिति से अवगत कराया। सारे हाड़ा सरदार इस तरह के अपमान के विरुद्ध लड़ने को तत्पर हो गये। उन्होंने उसी क्षण प्रतिज्ञा की हम कुम्भा जी की भांति जीते जी इस मिट्टी की बूंदी को नहीं देंगे।

कुम्भा जी ने कहा यह बात अभी प्रकट नहीं होनी चाहिए।

डेरे के बाहर एक अश्व आकर रुका। अश्व राणा जी का था। उसने राणा जी का सन्देश लाकर दिया। सन्देश पढ़कर कुम्भा जी ने अपने लगभग पचास साथियों को चलने का आह्वान किया। हाड़ा वीर चल पड़े।

कुम्भा जी ने अपनी पत्नी से अन्तिम विदाई ली। वह पूजा का थाल सजाकर लायी। आरती उतारी। अन्तिम बार अपने तेजस्वी और वीर पति के दर्शन किये। मन में कोई बोल उठा, 'भर ले जी भरकर दर्शन कर ले।" वह फिर रो पड़ी।

कुम्भा जी ने प्रस्थान किया। द्वार पर उनका पुत्र खड़ा मिल गया। वह तोतली बोली में बोला 'पिता जी आप कब लौटेंगे ?

कुम्भा जी ने उसे अपने सीने से चिपका लिया। वे भर भर आये। बाँदी ने आकर उसे अपनी गोद में ले लिया।

मिट्टी की बनी बूंदी के चारों ओर हाड़ा राजपूत रक्षा हेतु खड़े हो गये। अश्व पर आरूढ़ होकर कुम्भा जी सीसोदिया के पास गये। उनसे गले से मिले और गरजकर कहा 'हम बूंदी लड़कर आपको देंगे। बूंदी नाम की रक्षा करना हाड़ा का धर्म है, अतः आप हम पर वास्तविक आक्रमण करें।'

सीसोदिया में हलचल मच गयी। अवश्य राणा जी ने जब यह सुना तब वे रोष में भर आये। उन्होंने आज्ञा दी "हाड़ा को रौंद दिया जाय।"

मिट्टी की बूंदी के दुर्ग के द्वार पर कुम्भा वरसी अपने योद्धाओं को लिए पहरा दे रहा था। रणभेरी बजी। मारू ने नाद किया। हर हर महादेव और एकलिंग दीवाण की जय के साथ सीसोदियों ने आक्रमण बोल दिया।

चन्द हाड़ों ने सीसोदियों का बड़ी वीरता से सामना किया। भयंकर युद्ध के पश्चात मिट्टी की बूंदी को फतह कर लिया गया। कोई हाड़ा वीर जीवित नहीं बचा।

राणा जी ने कुम्भा वरसी को ढूंढा। उसके रोम रोम मानो घाव हो गये थे। राणा जी ने उन्हें बांहों में उठाया। अन्तिम सांस लेते हुए भी कुम्भा जी कह रहे थ 'मैं बूदी नहीं दूगा, कदापि नहीं दूगा ।" और राणा जी की बांहों म ही कुम्भा वरसी ने दम तोड दिया।

राणा जी ने व्यथित स्वर म कहा, 'हम आपके समक्ष नत मस्तक हैं। जिस धरती पर आप जसे भावना वाले वीर होगे, उस धरती को कोई भी पराजित व अपमानित नहीं कर सकता। दीवान जी, हाडा जी की शव-यात्रा राजकीय सम्मान के साथ निकाली जाय।'

राणा जी टूटे टूटे दाव को रखकर चले। एक बार फिर मिट्टी की बूदी को देखा! वह उनके गौरव पर खिलखिला रही थी विडबना से।



प्रीत

अंशुमाली की रश्मियाँ कोहरे से संघर्ष करने लगीं। कोहरा—अटूट और अभेद्य कोहरा। शीत लहरों मे बँधा और कोहरे की चादर मे लिपटा आगरा शहर। मौन और नितान्त निश्चल।

भयंकर शीत से भयभीत यमुना का स्थिर और सोया हुआ जल। शान्त और निस्पन्द।

अपने शयनकक्ष में मयूराक्षी शय्या पर निद्रा मे निमग्न हैं अप्रतिम योद्धा महान विलासी महाराजा गजसिंह राठोड। जोधणे (जोधपुर) के यशस्वी और अपराजेय राजाधिराज। समीप ही रजत-दीवट पर इत्र से सुवासित दीपक जल रहा था। उसकी ज्योति म शय्या पर बिछे मखमली जरीदार गद्दे चमक रहे थे। महाराज आलस्य में थे। चाकर कई बार

आकर उन्हें देख चुका था। आज महाराज समय पर क्यों नहीं उठ रहे हैं ? वह सोच सोचकर उद्विग्न और चिंतित हो रहा था।

और महाराज ! महाराज जगकर भी जगना नहीं चाहते थे। अब भी रात्रि का खुमार उनकी बड़ी बड़ी आँखों की पलकों को बोझिल बना रहा था और वे सपनीली मादकता में अपने आपको विस्मृत किये हुए थे।

शाहजहाँ के विशेष कृपापात्र नवाब फजल के घर का कल रात उन्हें आमंत्रण मिला था। वे गये थे—अपनी सम्पूर्ण पोशाक में। रेशमी जरीदार अचकन, श्वेत रेशमी चूड़ीदार पाजामा, कमरबन्द जिसकी किनारी स्वर्णिम जरी की थी। गले में अमूल्य हीरों का हार कानों में मुक्ता-लौंग। हाथों में सोने के कड़े।

वे जैसे ही नवाब की महफिल में पहुंचे वैसे ही नवाब ने उठकर उनका स्वागत किया। कुछ अन्य भी उमराव सरदार और मनसबदार बैठे थे। सभी को शराब की मनवार की गयी। सुरा के साथ एक ईरानी नर्तकी ने नृत्य और स्वर लहरियों से समा बाँध दिया। आँखों से जाम छलकने लगे नर्तकी के और न जाने कितने प्याले पी गये आये हुए मेहमान। जब महफिल की शमा बुझी तब लोग बेहोश मदहोश से अपने अपने रथों पर आरूढ़ होकर चल पड़े।

नवाब ने गजसिंहजी से रुखसत लेनी चाही। गजसिंह जी सुरा की मादकता में बहक रहे थे। वे उठे। सलाम किया और विदा ली, पर वे पुनः वहीं बैठ गए। उन्हें तनिक भी होश नहीं था। नवाब वहीं गाव तकिये का सम्बल लेकर लुढ़क गया।

महाराज गजसिंह के खास हाजरिए कृपालसिंह ने उन्हें उठाया और सावधान करते हुए प्रार्थना की अन्नदाता ! होश में आइए हम अपने डेरे चलना है।

'हम डेरे नहीं चल सकते। वह ईरानी नर्तकी कहाँ है ? हम उसे इनाम देंगे।'

"अन्नदाता, वह चली गयी है। अब हम भी चलना चाहिए। रात बहुत जा चुकी है।

गजसिंह उठे। रोशनी के वल म उनका कान्तिमय मुख और स्वर्णिम हो गया था। मानो गुलाब खिल उठा हो या फूल को किसी ने लाल रग म भिगो दिया हो। वे हाजरिए के साथ चलने लगे।

चलने चलने रुके और पश्चात्ताप भरे स्वर मे बोले "जिसकी नतकी इतनी रूपवती होती है उसकी बेगम मनारा कितनी रूपवती होगी! बहुत चर्चा सुनी है उसकी। हम कोई उसका शादार करा दे तो हम उसे मालामाल कर दें।

यह वाक्य उस जगह से कहा गया था जहां से उनकी आवाज सहजता से जनाने झरोखे तक जा सकती थी।

वे ईरानी नतकी की मधुर स्मृति मे खोए रहे। प्रात म मन्दिर का जब पावक शख बजा तब महाराज हडबडा कर उठे। जल्दी ही स्नानादि से निवत होकर वे मन्दिर म अभिन-वन्दन करने चल गये।

आज व दरबार म हाजिर नही हो सकेंगे ऐसा उन्होंने भोजन से निवत्त होते ही आलीजहां को कहला दिया और आप धूप लने के लिए अपने डेरे की ऊपरी मजिल पर आ गये।

धूप बहुत ही सुहावनी लग रही थी। बडी बडी आँखें इसीलिए बार-बार बन्द हो जाती थी कि अब वे उस महफिल की ईरानी नतकी को कल्पना करने की चेष्टा कर रही थी।

दास ने आकर सिर झुकाकर कहा "अन्नदाता! नवाब साहब की दासी आपसे मिलना चाहती है।

"नवाब साहब की दासी? आन दीजिए।"

क्षण ही मिनटों म एक चालीस वर्षीया औरत महाराज के समक्ष हाजिर हुई। उसने तीन बार कोर्निश की और चुपचाप खडी हो गयी।

"नवाब साहब का कोई परवाना लायी हो?" महाराज ने हुक्के की नली को मुह से बाहर निकालकर पूछा। औरत का रग गोरा था और

यह एकदम मुसलमानी वेश में थी। उसने पान खा रखा था।

उसने फिर मानसिंह की ओर बोली, 'गुस्ताखी माफ हो, मैं तनहाई में कुछ अर्ज करना चाहती हूँ।"

जो अंगरक्षक खड़ा था, वह सिर झुकाकर चला गया।

दासी ने अत्यन्त कोमल और नखरे से कहा "लौंडी को जहीन के नाम से पुकारते हैं। मैं एक खास मकसद से आपके हुजूर में पेश हुई हूँ। जान की मुआफी चाहूँगी।'

'हम तुम्हें सात गुनाह माफ करते हैं।

"हुजूर कल जब आपने ईरानी नर्तकी की तारीफ करते करते बेगम का जिक्र किया तब मैं झरोखे में खड़ी थी। आपकी हुस्न का इस तरह आशिक देखकर मेरा दिल पसीज गया और '

"और क्या ?" महाराज बेसब्री से बोले।

देखिए गरीब परवर, घर का राज खोल रही हूँ। कुछ '

अरे, तुम बेफिक्र रहो। हम तुम्हें मुँह माँगा इनाम देंगे। तुम्हारी झोली सच्चे मोतियों से भर देंगे।'

"बात यह है, अन्नदाता। दासी घुटनों के बल बैठकर बहुत ही धीमे स्वर में बोली हमारी सबसे छोटी बेगम साहिबा अनारा और नवाब साहब में नहीं बनती है। बेगम साहिबा के नाखून की भी बराबरी वह रक्कासा नहीं कर सकती। आप चाहें तो ।'

वासना में लिप्त और अत्यन्त विलासी किंतु महान योद्धा के समस्त शरीर में एक झुरझुरी-सी छूट गयी। उनकी इच्छा हुई कि वे अपनी हथेलियों को इस समाचार के मिलने की प्रसन्नता में रगड़ दें, लेकिन उन्होंने बेसब्री पर काबू किया। गम्भीरता से आकाश की ओर देखकर बोले जहीन! इस बात को मत भूलो कि तुम एक ऐसे इनसान के सामने खड़ी हो जो तुम्हें जिंदा जमीन में गड़वा सकता है, जो मुगलिया सल्तनत की नींव हिला सकता है। उससे किसी तरह का खेल खेलने की कोशिश मत करना।'

दासी काँपने लगी। उसने हाथ जोड दिये। उससे कुछ भी बोला नही गया। थर थर धूजती रही।

"जानती हो उस वक्त हम नशे मे थे।" महाराज ने पुन कर्कश कठोर आवाज मे कहा "हमारी कमजोरी का नाजायज फायदा!"

"तोबा करती हूँ, गरीब परवर! हम गरीब गुलाम ऐसा सोच भी नही सकते। कुछ लालच "

"हम तुम्हें खूब इनाम देंगे। सहसा महाराज ने स्वर बदलकर कहा, "पहले हम बेगम का दीदार कराओ।"

"जरूर करा दूगी। तब आपको मेरा यकीन आयगा कि हमारी मालकिन हकीकत मे हुस्न और इल्म की मालिका हैं।"

महाराज ने दासी को एक अँगूठी उसी वक्त दे दी।

× × ×

बादशाह के दरबार मे गजसिंहजी का बहुत ही मान-सम्मान था। शाहजहाँ उन्हें 'मामू' कहकर पुकारते थे। उनकी इज्जत और आनबान का विशेष ख्याल रखते थे। मन ही मन बादशाह गजसिंह जी की रुसवाई से डरते भी थे।

फिर दासी की वे सदा प्रतीक्षा करते थे और नवाब साहब स उन्होंने खूब दोस्ती गाठ ली थी। कभी उनके यहाँ जाना और कभी अपने यहाँ बुलाना।

और एक दिन वह दासी आयी। बहुत खुश जसे चाँद उसके चेहरे पर आ टिका हो। आकर महाराज से एकान्त मे बोली, "आज दोपहर,को बगम साहिबा आपका दीदार करना चाहती हैं।"

"मगर कहाँ ?"

'जमना के उस पार

बेगम साहिबा ने इल्तिजा की है कि बात को आस-पास के पेड भी न सुनें।"

गजसिंहजी ने अपनी अपार आतरिक प्रसन्नता पर अधिकार करते हुए कहा "उन्हें हमारी ओर से पूरा यकीन दिला देना।"

और गजसिंहजी अपने विश्वस्त अगरक्षको के साथ यमुना के उस पार पहुच गये। खिलखिलाती धूप रात भर के ठिठुराये पेडो को पूर्ण राहत दे रही थी। जल-वीचियाँ धीरे धीरे तट को स्पर्श कर रही थीं मानो वे तट को स्नान करा रही हो।

गजसिंहजी ने एक घने झुरमुट मे अपने सभी विश्वस्त अगरक्षको को सावधान किया, 'हालांकि इसमे किसी भी षडयन्त्र की गध नही आती है, फिर भी तुम लोगो को नितान्त सजग प्रहरी की भाति खडा होना पडेगा। सच्चा और स्वामिभक्त सनिक वही होता है जो स्वामी के सकेत पर एक क्षण भी असावधानी न बरते।" और उन्होंने अपनी विनोद दासी देवली को एकान्त म आने का सकेत किया। वह जब एकात में आ गई तब उन्होंने उससे आदेश भरे स्वर म कहा तुम बेगम की नाव के पास चला जाना। अत्यन्त चतुराई से इस बात का पता लगाना कि उसके साथ कोई सदिग्ध व्यक्ति तो नही है।'

"जो हुक्म, अन्नदाता। आप निश्चित रहिए।' देवली सिर झुका कर चला गई।

धूप से स्नान करत हुए जल म एक नाव मथर गति से आ रही थी। नाव पर सिर्फ दो मल्लाह थे। नाव भी कोई बहुत बडी नही थी। एक-दम साधारण।

गजसिंहजी सजग हो गए। एक बडे वक्ष के तने की ओट म खडे होकर वे आती हुई नाव को अपलक देखने लगे। देखते देखते वह नाव किनारे से आ लगी।

उसम स जहीन उतरी। जहीन के साथ बुरके म एक अन्य नारी थी। नारी के दो गोरे-गोरे हाथ उस काले बुरके म दिखाई पड रहे थे।

जहीन ने इधर उधर देखा। तभी देवली उसके पास हवा की तरह आयी। जहीन की आँखों में प्रश्न नाच उठा। देवली से उसका सीधा, प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं था। देवली ने मुस्करा कर कहा "मैं राजसिंहजी की खास बाँदी हूँ। आइए, मेरे साथ चलिये।"

बेगम ने वीणा के तारों के झंकृत होने जैसे स्वर में कहा, "नहीं जहीन, हम इन्हें नहीं जानते।"

देवली और कुछ कहे, इससे पहले ही महाराज स्वयं वृक्ष की ओट से निकल आए। उन्होंने अनुरागपूर्ण स्वर में कहा, 'जहीन, हम यहाँ हैं।"

जहीन ने एक बार इधर उधर देखा। फिर वह एक घने झुरमुट में बेगम साहिबा को लेकर घुस गई। यह झुरमुट सचमुच का अभिसार स्थल था। चारों ओर घनी झाड़ियाँ और झाड़ियों को और गहरा करने के लिए उन पर बेलें लिपट गई थीं। बेलों में छोटे छोटे लाल, पीले और सफेद गंधहीन फूल खिले हुए थे।

जहीन ने आदाब बजाकर कहा, 'महाराज, मेरा इनाम ?' महाराज ने तुरन्त अपने गले के एकलड़ हार को खोलकर उसे दे दिया और वचन दिया कि वे उसे नवाब साहब से माँगकर ले आयेंगे।

जहीन चली गई। प्रस्तर प्रतिमा की तरह खड़ी रही अद्वितीय सुन्दरी और कोमलांगी अनारा बेगम।

महाराज उसके समीप गये। मधुर स्वर में बोले "इस परदे को दूर कीजिए बेगम साहिबा! हम नहीं जानते कि यह प्यार किस किस्म का है पर इतना जरूर जानते हैं कि हम आप से मिलने के लिए तड़प रहे थे रात दिन बेचैनी में साँसें ले रहे थे। शायद इसलिए प्रेम करने वालों के बारे में लोगों ने कहा है कि वे जन्म जन्मान्तर से प्रेम करते आते हैं।'

महाराज भावावेश में थे। क्या कह रहे थे, यह स्वयं उन्हें मालूम नहीं था।

रोककर, निस्तब्ध।

महाराज उसके समीप गये। अपने हाथ से बुरके को उलटा दिया। हठात महाराज के मुँह से आश्चर्य म डूबी 'ग्रोह!' निकल गयी, जस काली, काजल-सी घटाओ के बीच चाँद नही सूरज! तेजस्वी सूरज!

महाराज अप्रभित से खड़े रहे। पथरायी दृष्टि से, देखते रहे अपने स्वप्नो की रानी अनारा बेगम को और अनारा की नाजुक सी पलकें पल भर के लिए खुलकर झुक गई। उसके लरजते होठो पर आनन्द "" थरथराकर रह गया। हाथ थोड़ा सा उठा तो उठा ही रह गया।

"बेगम! जहीन सच कहती थी कि हमारी बेगम साहिबा चाँद का टुकड़ा हैं। वह आपके बारे मे इस तरह बताती थी, मानो वह नही, आप खुद हमसे बातचीत कर रही हो। इस पहली मुलाकात म हम कुछ नही कहते सिर्फ इतना ही वायदा करते हैं हम आपके लिए सब कुछ निछावर कर सकते हैं।

अनारा बेगम ने अपनी पखुडियो सी पलको को धीरे धीरे खोला। बहुत ही मद्धिम स्वर मे बोली आपके बारे म मैं बहुत सुन चुकी हूँ। हम भी नक्श नही छोडेंगे। आप यकीन रखें।'

महाराज का विपुल विलास म लिपटा मन दहक उठा। उन्होने आगे बढ़कर बेगम के हाथ थाम लिए और उन्हें चूमकर कहा 'विजय।'

बेगम ने सिर्फ मौन सलाम किया।

× × ×

फिर दिन प्रतिदिन उनका प्यार बढ़ता गया। महाराज अपना सारा शौर्य कौटुम्बिक परम्परा गौरव मान-मर्यादा और मानवान को विस्मृत करके अनारा की आगोश मे खो गए और अनारा बेगम ने भी किसी

ी परवा न करके गर्जसिंहजी को अपना सवस्व समर्पित कर दिया।

वे हमेशा मिलने लगे। खुलेआम मिलने लगे। उनके चर्चे भी शुरू ए। मुसलमान सरदारों को यह अनुचित लगा। उन्होंने नवाब से इसकी शिकायत की। पहले तो नवाब को विश्वास नहीं आया, पर बाद मे सारी स्थिति का ज्ञान हुआ, तो वे सजग हो गये। उन्होंने तुरन्त अनारा पर प्रतिबन्ध लगा दिया। अब अनारा कहीं आ जा नहीं सकती थी। ड्योढ़ी र भी सख्त पहरा बिठा दिया गया था—इतना सख्त कि कोई भी बिना वजह बाहर नहीं जा सकता था।

लेकिन जहीन ने देवली को अपने यहाँ बुलाया। बेगम ने दर्द भरे स्वर मे कहा, "मैं महाराज के पास जाऊँगी। मैं उनके बिना नहीं रह सकती देवली! उन्हें मेरी ओर से हाथ जोड़कर कहना कि वे मुझे आजाद करा दें।"

देवली ने बेगम को आश्वस्त करते हुए विनम्र शब्दों में उत्तर दिया, 'महाराज स्वयं तड़प रहे हैं। उन्होंने कहा है कि वह मुझे एक बार मिल ले। सिर्फ एक बार। क्या आप उनसे मिल नहीं सकतीं?

"कैसे मिल सकती हूँ, देवली! नवाब खुद बादशाह सलामत के खास आदमी हैं। मुझे डर इस बात का है कि कहीं मेरी वजह से कोई बड़ा खून-खराबा न हो जाय।"

"मैं इसका क्या जवाब दूं? आप किसी भी तरह उनसे मिल लीजिये।

कुछ क्षण। सन्नाटा छाया रहा। बेगम सोचती रही। सहसा चेहरे पर प्रसन्नता की रेखा नाची। वह बोली "महाराज पश्चिमी महल के झरोखे में आ सकते हैं क्या? उन्हें कहना कि मैं वहाँ उनका इन्तजार करूँगी।"

देवली ने आकर महाराज से सारी बातें बतायी। महाराज और विह्वल हो उठे। उन्हें लगा कि बेगम के बिना यह जीवन, यह भोग-विलास यह शौर्य और यह शानोशौकत, सब व्यर्थ है।

'मैं जाऊंगा देवली, तू बेगम को जरूर कह दे कि वह झरोखे से रस्सी की सीढ़ियाँ बनाकर डाल दे। मैं उनके द्वारा झरोखे में पहुंच जाऊँगा।'

देवली चली गई।

× × ×

निशीथ का समय। महाराज अपने व्यक्तित्व की महत्ता को भूलकर साधारण नायक की तरह चल पड़े। वे हाथी पर थे। जसे ही हाथी झरोखे के नीचे पहुंचा वसे ही बेगम ने रस्सी की सीढ़ियाँ लटका दी। महाराज पलक झपकते चढ़ गये।

वह अनारा का अपना कक्ष था। अनारा महाराज से लिपटकर सिसक पड़ी। महाराज भी विह्वल हो गए।

'बेगम!'

महाराज! आप कुछ भी कहिये पर यह सच है कि हम मुहब्बत की राह में बहुत आगे बढ़ चुके हैं। यहाँ से लौटकर मैं जिन्दा नहीं रह सकूंगी। पता नहीं आप क्या सोचते हैं?

महाराज ने उसके नाजुक हाथ को अपने हाथ में लेकर कहा 'बेगम! मैं बहुत ही ऐय्याश रहा हूँ। लेकिन तुमसे प्यार होने के बाद मेरा दिल बदल गया है मैं भी स्वयं बदल गया हूँ। मुझे लगता है कि वह गजसिंह जो औरत को खेल और रूप की वस्तु समझता था, मर गया है। तुम्हारे प्रेम की छाया में एक नये गजसिंह ने जन्म लिया है। मैं भी तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकता।'

प्रकाश धीमा था। बेगम उनके पास गयी। रुंधे स्वर में बोली, 'कुछ कीजिए मुझसे अब अलगाव नहीं सहा जाता। मैं कब तक मुहब्बत की झूठी बातों से नवाब को भरमाये रखूंगी। शराब के जाम पिलाये रखूंगी। सच, मैं आपके इश्क के साये में दम लेना और दम तोड़ना

चाहती हूँ। मैं नवाब के साथ हरगिज नहीं रह सकती।"

गजसिंहजी बाहर फले अंधेरे को देखते रहे। बेगम की खिड़की के चौखटे पर सिर रखकर लम्बी साँसें ले रही थी। गजसिंहजी ने गम्भीर स्वर म कहा, "अपने भगवान की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैं तुम्हारे लिए ससार की सारी खुशियाँ छोड सकता हूँ। मारवाड का सिंहासन और मुगलिया सल्तनत का मान-सम्मान छोड सकता हूँ। बेगम मैं तुम्हे वचन देता हूँ कि प्राण रहते तुम्हें नही छोड़ूँगा। मैं राजपूताना का वीर हूँ। क्षत्रिय हूँ, क्षत्रियो म राठौड हूँ। हम अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए सिर कटने के बाद भी धराशायी नही होते। और आपको अपनी तलवार पर हाथ रखकर भरोसा देता हूँ कि आपका वही ओहदा होगा जो हमारे महलो म पटरानी का होता है।'

"फिर आप मुझे अपने यहाँ ले चलिए।"

"मैं आपको इसी समय ल चल सकता हूँ।

"फिर ले चलिए।"

और रात के अंधेरे म दोनों जने झरोखे से उतरकर चले आए। खामोश रात और उन दोनो के खामोश इरादे। किसी को कुछ पता न चला, सिर्फ जहान जानती थी कि बेगम कहाँ है।

दूसरे दिन सारे नगर मे तूफान मच गया। आगरा के हर प्रतिष्ठित व्यक्ति के यहाँ इसी चर्चा का बाजार गरम था। लोग पता नही लगा पा रहे थे कि आखिर बेगम गयी कहाँ ? हाँ, यह निर्विवाद रूप से कहा जा रहा था कि बेगम की उम्र नवाब साहब से बहुत कम थी।

और नवाब साहब जो स्वय शाहजहाँ के कृपापात्र थे, जहाँपनाह के के हुजूर म हाजिर हुए।

"क्या बात है नवाब साहब ?"

नवाब साहब ने सारी बातें दर्द भर स्वर मे सुना दी। शाहजहाँ ने अनुमान लगाया। कल ही उनके प्रमुख गुप्तचर ने बताया था कि गजसिंह जी का अनारा बेगम से उन्होंने गम्भीर स्वर में नवाब से कहा, "आप

फिक्र न करें, हमारी ओर से पूरी कोशिश की जायेगी।"

शाहजहाँ ने तुरन्त गजसिंहजी को तलब किया। गजसिंहजी भी तुरत हाजिर हुए। औपचारिकताएँ पूरी करते ही बादशाह ने तनिक आवेश-भरे स्वर में कहा, "अनारा बेगम कहाँ है?" बादशाह की नजरें दीवार पर बने एक तैलचित्र पर थी।

'मुझे नही मालूम आलीजाह? और आपने मुझसे ऐसा सवाल किया ही क्यो? मैं मुगलिया सल्तनत की देखभाल करता हूँ, उसके मन सबदारो ताजमी सरदारो की बीबियो की नहो।' गजसिंहजी का स्वर कठोर हो गया।

शाहजहाँ ने प्रश्न भरी दृष्टि उन पर फेंकी। ईरानी कालीन पर थोडी चहल-कदमी करके कहा, "मुगलिया सल्तनत पर आपके बहुत अह सान हैं। यह भी सही है कि आपने अपनी बहादुरी और जवामरदी से हमारे तख्तेताऊस की कई बार हिफाजत की है लेकिन हम यह भी जानते हैं कि औरत आपकी कमजोरी है। ऐसे हालात मे आप हमारे किसी सरदार को नाराज करके हमारे बीच झगडा भी करा सकते हैं। जरा हमारी बात पर गौर कीजिए कि इससे हिंदू और मुसलमानो मे फसाद हो सकता है।"

गजसिंहजी की भृकुटियाँ तन गयी। कुछ रुष्ट होते हुए बोले, 'एक अदना मनसबदार महाराज गजसिंहजी पर बे-बुनियाद दोष लगायेगा आलमपनाह? राठौड का रक्त इतना ठण्डा नही हुआ कि मुगल जब चाहें उन्हें ललकार दें। यदि मुझ पर झूठा दोष लगाने का साहस किया गया तो नवाब को बहुत बुरे अंजाम से टकराना पडेगा।'

अब शाहजहाँ ने अपना रुख बदला। वे समझ गये कि महाराज इस तरह की डाँट डपट और धमकी मे नही आ सकते। तुरन्त मधुर स्वर मे बोले, "आप मेरी बात का मतलब नही समझे आप मुझ पर यकीन क्यों नही करते? मुझमे भी आपका खून है। मैं आपको तहेदिल से मामू कहता हूँ। आप मुझे अपना समझकर सब कुछ सच-सच बयान कीजिए।

मैं आपसे एक शहंशाह ही नहीं, जाती तौर पर अर्ज कर रहा हूँ कि मामू, मैं आपके हक में ही फैसला करूँगा।"

"वायदा करते हैं।"

"वायदा करता हूँ, मामू।" शाहजहाँ ने विनीत स्वर में कहा, "मैं नहीं चाहता कि ऐसी मामूली बातें खौफनाक अन्जाम में बदल जायें।"

गजसिंहजी ने सारी बातें बताकर कहा "बेगम हमारे पास है। हम उससे अलग नहीं रह सकते। हम उसके लिए सब कुछ छोड़ने के लिए तैयार हैं। आपकी नजरे इनायत और ओहदा भी। यह भी सच है कि हम उसके लिए दुनिया की बड़ी से बड़ी ताकत से टकरा सकते हैं।"

"हमसे भी?"

"गुस्ताखी माफ हो, वक्त आया तो मुगल सल्तनत से भी।" गजसिंहजी की आँखें झुक गयीं।

बादशाह ने बात बदलते हुए कहा, "और आपके राठौड़ वंश में उसका क्या ओहदा रहेगा?"

"हम उसे वही इज्जत देंगे जो अपनी महारानी को दे रहे हैं। जहाँपनाह, हम उसे बहुत प्यार करते हैं। हम उसके साथ पूरी वफा और सच्चाई से रहेंगे।"

शाहजहाँ ने कहा, "हम आपको गैर तौर पर बेगम बख्शते हैं। आप उसे जोधपुर भेज दीजिए। पीछे से आप चले जाइए, लेकिन बहुत ही खुफिया तौर पर। हम नवाब को दक्षिण में भेज देंगे। सुन रहे हैं आप?"

"हम आपके इस अहसान को कभी नहीं भूल सकेंगे।" महाराजा ने सिर झुका दिया था।

और महाराजा गजसिंह ने अनारा बेगम को अपनी मौत तक एक हिन्दू रानी से कम इज्जत से नहीं रखा। आज भी जोधपुर में उस प्रेम-दीवानी की याद में अनारा की बावड़ी बनी हुई है।



एक और नूरजहा

रसकपूर की निजी बठक म उसकी हसी गुजित हो
गयी । पन्ति शिवनारायण मिश्र उसकी इस हसी का मम
नही समझ सके । वह अप्रतिभ सा रसकपूर को देखने रह
गये । रसकपूर अपनी रेशमी गुलाबी ओढ़नी को जरा मि
की ओर झुका कर बोली 'पडितजी आपने मुझे बहुत
लाड-प्यार किया है । मैंने अपने जीवन म किसी को य
अपन सिर पर सच्च प्यार का हाथ रखते हुए पाया है, तो
आपको । मैं आपको यकीन दिलाती हूँ कि जयपुर के दीवान
आप ही होगे ।

साँझ वार्तालाप म कही सरककर पवत घाटियो मे छि
गयी थी ।

बान्दी ने आकर इत्र का दीपक जला दिया था जिससे
बैठक म सुवासित आलोक फल गया । समीर म द म द चल

रहा था। काँपती लौ में मिश्र का चेहरा और गम्भीर लग रहा था। रसकपूर के आँचल के एक पल्लू को स्नेह से चूमते हुए उसने कहा, "बेटी, मुझे तुम्हारा ही भरोसा है। सारे सामन्त, सरदार और उमराव तुम्हारे विरुद्ध षड्यन्त्र रच रहे हैं। वे तुम्हें शीघ्र से शीघ्र जलील करके अपने अपमान का बदला लेना चाहते हैं।"

रसकपूर ने घृणा से एक हुंकार भरी और कहा, "महाराजा जगतसिंह मेरी मुट्ठी में हैं। पंडितजी, वे मेरे बिना जिंदा नहीं रह सकते। वे मुझे बहुत प्यार करते हैं। फिर मैंने अपने विरोधियों को या तो पदच्युत करा दिया है या मरवा दिया है।"

बडारन नरबदा ने उसकी बैठक में प्रवेश किया। बडारन ने काली छींट का घाघरा और काँचली पहन रखी थी। सिर पर झीना ओढ़ना ओढ़ रखा था। उसके गले में चाँदी का कठलिया और साँकल थी। कमर में चाँदी का कन्दोड़ा झूल रहा था। उसने रसकपूर का सिर झुकाकर मुजरा किया। विनीत स्वर में बोली "अन्नदाता ने आपको याद फरमाया है।"

"मैं अभी हाजिर होती हूँ।" रसकपूर ने नरबदा से कहा और उठती हुई पंडितजी से बोली, "आप निश्चिंत रहिए। आप जयपुर के दीवान बनेंगे ही।

पंडितजी ने उसे आशीर्वाद दिया और प्रसन्नता में डूबी हुई वह चली गयी।

साँझ और गहरी हो गयी थी।

महल के मंदिरों की शंखध्वनि और घण्टे बज उठे। रसकपूर ने अपनी बाँदियों से स्नानादि का प्रबन्ध करने के लिए कहा।

जब वह नहाकर बाहर निकली तब उसका अद्वितीय सौंदर्य कण-कण में व्याप्त हो गया। उसे बाँदियाँ वस्त्र पहनाने लगीं। रेशमी झीने वस्त्र। उसका गोरा रंग, केसरिया लहंगा, काँचली और ओढ़ने में एक मेल हो रहा था। कानों में हीरक कर्णफूल और गले में हीरक गलहार।

भलमल भनमल।

पाँवों में वह बजती हुई पायल जरूर पहनती थी। वह सज धजकर महाराजा के शयनकक्ष में पहुंची।

जयपुर के महाविलासी और चरित्रहीन राजा जगतसिंह रसकपूर के लिए उन्मत्त हो गये थे। रसकपूर एक वेश्या, एक मुसलमान वेश्या, जिसने जयपुर के राजघराने में तूफान मचा दिया था। राजा जगतसिंह कौटुम्बिक गौरव की प्रतीक अपनी समस्त रानियाँ जोधी, जसी और भटियाणी को छोड़कर उसके वासनालिप्त प्यार में तन्मय हो गये थे। सभी सामंत सरदारों ने इसका घोर विरोध किया। 'यह वेश्या उनके धर्म को पददलित करके छोड़ेगी।' इस तरह की चर्चाएँ फलने लगी थी पर रसकपूर ने किसी की परवाह नहीं की। वह अपनी मनमानी करती थी, क्योंकि स्वयं महाराजा उसके हाथ की कठपुतली थे। उसने एक तरह से शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली थी।

पायल की झंकार जैसे ही जगतसिंहजी के कर्ण-कुहरों में पड़ी वैसे ही उन्होंने अपनी बाँदी से कहा "लगता है रसकपूर आ रही है। इत्र का छिड़काव कर दो और दीपक जलाओ। मुझे और कसूम्बा पिलाओ।"

कसूम्बे में मतवाले बने जगतसिंहजी से रसकपूर कहती 'मुझे सच डर लगता है राजाजी कहीं आप अपने दुष्ट सरदारों की बातों में आकर मुझे देश निकाला न दे दें? आपका वह बनिया दीवान आज ही एक आदमी का ऐसा कह रहा था। मुझे उसकी वफादारी पर शक है। उसे अपने पद से हटा दिया जाय।'

तब रसकपूर की बाँहें महाराजा के गले चारों ओर लिपटने लगतीं। वह अपने सिर को महाराजा की छाती पर रख देती। महाराजा के चारों ओर वासना के सागर ठाठें मारने लगते। महाराजा कहते, "हम उस दीवान को कल ही पदच्युत कर देंगे। हम तुम्हारे एक इशारे पर सारे राज्य का शासन बदल सकते हैं।'

और दूसरे दिन पंडित दीवान हो गया। सारे कछवाह राजपूत जल

उठे। इस वेश्या ने महाराज पर न जाने क्या जादू कर दिया है ? वे किसी की भी नहीं सुनते। क्या किया जाय, रसकपूर का पतन कैसे हो ?

पर रसकपूर ने और चतुराई से कदम उठाना शुरू किया। उसने कुछ विश्वस्त लोगों व बाँदियों को गुप्तचरी करने के लिए छोड़ दिया। सामन्तों की यह भीतर ही भीतर कमजोर करने लगी। उन्हें आपस में भिड़ाने लगी। शीवान मिश्र उसे अत्यन्त ही बलवान बना रहा था। वह कूटनीतिज्ञ और दुष्ट प्रकृति का व्यक्ति अपनी पद की रक्षा के लिए रसकपूर के चारों ओर साँप की तरह लिपटा रहता था।

सूर्य तप रहा था। जयपुर वीरान मरघट-सा लग रहा था—बिलकुल साफ और सूना। उदास दोपहर सब जगह सोयी पड़ी थी।

रसकपूर अपने भवन में बैठी थी। दो बाँदियाँ पंखे झल रही थीं। दीवान समीप बैठा गम्भीर चर्चा कर रहा था। दीवान फरमा रहा था, 'ठाकुर चाँदसिंह तुम्हारा खुलमखुल्ला विरोध कर रहा है। उसके पीछे बड़े बड़े सामन्तों का हाथ है। मुझे खतरा लग रहा है।

'आपको खतरा हर वक्त लगता ही रहता है पंडितजी ! पर रसकपूर ने कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हैं। मैंने राजाजी से अपने नाम का सिक्का चलाने की आज्ञा ले ली है। मैंने उनसे वचन भी ले लिया है कि मेरा सम्मान जोधाणी, जैसाणी और भटियाणी रानियों की तरह हो। मेरा रुतबा उनके बराबर हो। दरबार में मेरा वही सम्मान हो जो एक रानी का होता है।

"फिर उन्होंने क्या कहा ?'

'उन्होंने फरमाया कि तुम्हारा वही सम्मान और वही इज्जत होगी। रसकपूर के इशारे पर सारा शासन चलाया जा सकता है। राजाजी मेरे लिए अपना सर्वस्व त्याग सकते हैं।'

'मेरे बारे में कोई चर्चा हुई ?" और यह प्रश्न किया शीवान ने।

'हुई। वे आपसे बहुत खुश और सन्तुष्ट हैं।"

"फिर कल दरबार में मिलेंगे।"

रसकपूर दीवान के जाने के बाद दपण म अपने-आपको निहारती रही, फिर दम्भ म हस पडी। उसने अपने चारों ओर देखा, अतुल वभ विखरा पडा है। जयपुर के राजपूती गौरव को उस नतकी ने मानो प दलित कर दिया हो।

× × ×

दरबार।

महाराजा जगतसिंह ने दरबार म प्रवेश किया। रसकपूर उनके सा थी। रूप की ज्योतित शिखा की भांति उसका सौन्य ज्वाजल्यमान ह रहा था। कुछ सरदार जल रहे थे। कितना अनुपम! कितना अलौकिक!

स्वत ही साम त सरदार गरदन झुकाकर मुजरा कर रहे थे। कि दूना के सामत चादसिंह ने अपनी गरदन नही झुकायी। वह तनक खडा रहा।

महाराजा के पाँव कालीन स चिपक गये। दरबार की सारी दीवा जैसे काप उठी। महाराज क्रोध म जल उठे। अपने हाठ को अजाब तर से हिलाकर व बोले 'ठाकुर सा! दरबार के काण-कायदे भी नहा र जाने? हम मुजरा कीजिए।'

'मैं आपका मुजरा कर सकता हूँ पर इस कन्या का नहीं। जिसक इज्जत और मान हाट की वस्तु है उसके समक्ष राजपूत का सिर नहा झु सकता।

ठाकुर सा! चीख पडे महाराज। उनकी आँखें बहुत ही भयाव हो गयीं। मूछें क्रोध म फुरकने लगी। उनसे तत्क्षण एक शब्द भी बोल नही गया।

सारे दरबारी स्तब्ध हो गय। दीवान मिश्र अपनी तलवार पर हा रखकर खडा था। सबको अनय होने की आशका हो गयी। महाराज

अत्यत कठिनता से बोल पाय   इस गुस्ताखी की सजा जानत हो ? हम आपको कोल्हू म पिसवा देंगे।

ठाकुर के काना म चमकत हीरे के लौंग हिल उठे। अपने कानों को स्पश करती मूछो पर ताव देकर व बोले   और आप कर ही क्या सकते हैं ? हिंदुओं का विनाश या तो उसकी धार्मिक अधता न किया या भोग-विलास न। कछवाहा का रक्त आज आज एक वश्या के लिए इस तरह तडपेगा, यह हमन सपन म भी नही सोचा था। मैं इस रडी को न आज मुजरा करन दूगा। और जिस आयोजन म यह भाग लेगी, उसम मैं कदम नही रखूगा।

रसकपूर अब भी तटस्थ सी खडी थी। अपनी जलती आंखो स वह कोर्टसिंह को देख रही थी और समझ रही थी अन्य सामतो को भी। वह सबके चेहरो को पढ रही थी कि सारे सामन्त महाराजा क विरुद्ध हैं। विरोध की आंखो म घणा की आग बनकर चमक रहा है। यहा कुछ अधिक कर हो गयी तो महाराज की हत्या तक हो सकती है। इसलिए उसने ाँ स चलना श्रयस्कर समझा। उसन नाराजगी के स्वर में कहा, "मैं ती हूँ, राजाजी। मैं आपकी यह बदइज्जती नही देख सकूगी।"

रसकपूर हवा की तरह चली गयी। महाराजा उस रोकना चाहते थे, र उनकी जबान तालू स चिपक गयी।

दरबार म सन्नाटा छा गया।

कोर्टसिंह न कहते हुए पुन कहा 'कछवाहा की पवित्र और गौरव मयी वसुधरा पर एक वश्या का सिक्का चलगा। क्या सब रानियाँ मर गयी है, अन्नदाता ! वासना म इतने लिप्त मत होइए। कछवाहो के मान सान को कलकित मत कीजिए। उनकी मर्यादा को धूल धूसरित   ।"

महाराजा ने अपने भीतर का सारा जोर लगाकर कहा, 'खामोश ! हम कहते हैं कि आप चुप हो जाइए वरना हम आपको दरबार में कत्ल करा देंगे।"

चौर्नसिंह दरबार से निकल गया।

वातावरण बहुत बोझिल हो गया था। दरबार बर्खास्त कर दिया गया।

× × ×

राजाजी की सवारी निकली थी।

हाथी के हौदे के स्वर्ण सिंहासन पर महाराजा के साथ रसकपूर बैठी थी। लोग जय जयकार कर रहे थे। दीवान मिश्र सारे सामंतों की देख भाल कर रहा था। चार्दसिंहजी नहीं आये थे। वह चौर्नसिंह पर क्रोधित हो रहा था और साथ ही उनके विरुद्ध षडयन्त्र भी रच रहा था।

रसकपूर के गुरगे अपने दोनों हाथों से वे ही सिक्के लुटा रहे थे जो महाराजा ने रसकपूर के नाम से चलवाये थे। ब्राह्मण दीवान ने अपने आदमियों को सिखा पढ़ा दिया था कि वे महाराजा के जयघोष के साथ महारानी रसकपूर की भी जय बोलें। उसकी जयकार के साथ राजपूतों को लगता था कि किसी ने उनके जिस्म पर जलती शलाका चिपका दी हो पर सभी खामोश। जलूस शहर में घूमकर महल में पहुंचा। महल में आकर महाराजा के निजी भवन में। रसकपूर उनके साथ थी।

एकान्त होते ही रसकपूर अपनी रेशमी बाहें महाराजा के गले में डाल कर बोली "यह इज्जत आप ही मुझे दे सकते हैं। राजाजी, आपने इस नाचीज को कितना आदर बख्शा है। अब आपसे एक ही अर्ज है कि मुझे सदा अपने चरणों में पड़े रहने दीजिएगा। यही इज्जत यही मान यही अधिकार हो मेरे।'

"हम तुम्हें वचन देते हैं कि तुम्हें इतना ही मान मिलेगा।

फिर वही वासना का समन्दर। मन की दुर्बलता। जगतसिंहजी क्षण क्षण में विचलित हो जाते टूटने लगते दीन हो जाते और रसकपूर

माँगती, 'फला बादी को हटा दिया जाय। फला सामत के अधिकार छीन लिये जायें। फला को फला पद का अधिकारी बना दिया जाय। मुझे इतना रुपया चाहिए। और महाराजा हाँ हाँ करते रहते और अत में झुंझलाकर कहते, "मेरा सभी कुछ तुम्हारा है। यह धन, महल और शासन।"

और आज उसने दीवान को उसी समय बुलाकर आज्ञा दी, ठाकुर चाँदसिंहजी ने राजाजी का अपमान और दरबार की मर्यादा तोडी है, इसलिए उन पर दो लाख रुपया जुरमाना किया जाता है। जुरमाने की अदायगी अगर न हो तो उनकी जागीर जब्त हो जाय।

रसकपूर ने इस फरमान पर महाराजा के उसी पल हस्ताक्षर कराए। मोहर भी लगवायी और दीवान को दे दिया।

चाँदसिंह सभी सामन्तों के पास गया। सामत क्रोधित हो उठे। पर दीवाण मिश्र ने बहुत ही अच्छी नाकेबन्दी कर रखी थी। चाँदसिंह परेशान रहने लगा।

× × ×

बडारन नरवदा राज्य की वफादार बाँदी थी। वर्षों से नमकहलाली का हक अदा करती आयी थी। जोधाणी रानी के साथ वह दहेज मे आयी 'गोली' थी। पर शीघ्र ही अपनी चतुराई और वफादारी के बल पर रावले की बडारन बन गयी। वह इन सब तमाशों को देख रही थी। जोधाणी का अपमान, उपेक्षा और उसकी पीडा। रानी पति वियोग मे कभी बावली-सी हो जाती थी। नरवदा को कहती थी, इस रसकपूर की हत्या कर दो।

नरवदा जानती थी अपने पद की मर्यादा जिम्मेदारी और उलझन। वह राणी-सा को कहती 'आप धीरज रखिए। कभी वह खेल खेलूगी कि पासा ही पलट जायगा।'

और एक दिन उसने सड़क पर एक सेठ की बेटी को देखा। देखा तो देखती रह गयी। रसकपूर से भी अधिक रूपवती। उसने तुरन्त उसका अता-पता लिया फिर कुटनियों को छोड़ा। वह महाराजा के चरित्र की दुर्बलता को तो समझी हुई ही थी।

रसकपूर के पतन का एक ही इलाज है—एक दूसरी रसकपूर।

मौका मिलते ही उसने उस लड़की को महाराजा के समक्ष पेश किया। राजा चकित रह गये। लेकिन वे रसकपूर को अपने मन की इस कमजोरी और उस लड़की की जानकारी से अनभिज्ञ रख रहे थे। नरबदा कहती, "रसकपूर कभी भी उसकी हत्या करा सकती है, अन्न दाता। वह बहुत ही निर्दयी है। और यह दीवानजी इन सारे सामन्तो को अधिक खिलाफ करके आपको शक्तिहीन बनाना चाहते हैं। ठाकुर चाँदसिंह विद्रोह करने पर उतारू हैं।

और इसी तरह नरबदा महाराजा को उकसाती रही। एक दिन जब महाराजा ने उस लड़की के बारे में पूछा ' वह हमारे पास क्यों नहीं आती नरबदा ? हम उसे और उसके बाप को निहाल कर देंगे। हम तुम्हें मुँहमाँगा इनाम देंगे। तुम देर मत करो।

' पर यह रसकपूर अन्नदाता वह मुझे जिंदा जला डालेगी।'

"रसकपूर को मालूम ही नहीं पड़ेगा।"

' ऐसा आप मत सोचिए अन्नदाता। उसके अपने लोग भी महल में बहुत हैं। आप उसे अपने रास्ते से हटा क्यों नहीं देते ?"

यह सम्भव नहीं। हम उसे चाहते हैं प्यार करते हैं। हमने उसको कई वचन दिए हैं नरबदा ! इस मामले के बीच रसकपूर को मत लाओ। कोई और उपाय ढूंढो।

और सारे सामन्तो तथा रानियो की दृष्टियाँ नरबदा पर लगी हुई थी। बस अब नरबदा कोई नया धमाका करे।

नरबदा ने उस लड़की के बाप को एक ऊंचा ओहदा दिला दिया। उस दिन महाराजा ने फिर उस लड़की को देखा। वे वाचाल हो गये।

नरवदा को एकान्त म ले जाकर बोले, "मैं तुम्हें मुँहमाँगा इनाम दूँगा। नरवदा, मेरी इस इच्छा

"आप इस रसकपूर बाईजी को ।'

फिर तुम इसको बीच मे लाती हो।" महाराजा रुष्ट हो गये। कठोर हो गए।

'अन्नदाता हजूर माफी हो। आप जिस रसकपूर पर इतना अभिमान कर रहे हैं, वह आपके प्रति वफादार नहीं है। आप त्रिया-चरित्र को नही जानते।"

"क्या बकती हो?' महाराजा उत्तेजना म खड़े हो गये।

ठीक कहती हूँ। वह आपके साथ-साथ किसी और को अन्नदाता वह कुलटा है।'

"नरवदा हम तुम्हारी जबान खींच लेंगे।"

"हाथ कगन को आरसी क्या? आज दोपहर को मेरे साथ आप चलिए।"

× × ×

दोपहर!

नरवदा महाराजा को अपने साथ रसकपूर के निजी कक्ष मे ले गयी। रसकपूर के साथ कोई खूबसूरत जवान सोया हुआ था। महाराजा ने तलवार निकाली। नरवदा ने उसे रोक लिया। अर्ज करने लगी, "इसकी यह सजा नही है, अन्नदाता! इस वेश्या को कठोर से कठोर दण्ड मिलना चाहिए। इसकी वजह से सारे जयपुर म अशांति और विद्रोह के बीज पड़े है।"

महाराजा उद्विग्न से वापस आये।

नरवदा ने रसकपूर के समीप सोये युवक को सौ मोहरें दी

वस्तुत वह रसकपूर की एक विश्वसनीय बांदी थी जो थोड़ी देर के लिए पुरुष बनी थी, रुपयों के लालच में। नरवदा ने उसे यह भी धमकी दी 'यदि तूने कभी राजफाश किया, तो अन्नदाता सबसे पहले तुझे ही सूली पर चढ़ा देंगे, समझी।"

× × ×

'दीवानजी को पद से अलग कर दिया गया है।" रसकपूर की एक दासी ने घबराते हुये कहा।

"क्यों ?' रसकपूर चौंकी।

'पता नहीं, बाईजी, अभी-अभी मुझे यह खबर लगी है। वह अब भी आकुल-व्याकुल थी।

ऐसा नहीं हो सकता राजाजी ऐसा नहीं कर सकते। मैं उनके पास जाती हूँ। कहती हूँ क्या इसीलिए मुझे इतने वचन दिये थे। प्यार किया था। क्या इसी बूते पर मैं शासन बदल सकती हूँ! नहीं, मैं राजा जी को ऐसा नहीं करने दूँगी। जरूर किसी ने तुझे झूठी खबर दी है।

वह ज्य ही कमरे से बाहर निकली कि उस सिपाहिया ने बाहर निकलने से मना कर दिया, आप इस कमरे से बाहर नहीं जा सकतीं। यह महाराजा की आज्ञा है।

क्या बकते हो ? वह चिल्ला पड़ी।

हम सही फरमा रहे हैं बाईजी।'

रसकपूर तड़प उठी। यह सब यकायक और इतना जल्दी क्या हो रहा है ? वह आकर शय्या पर पड़ गयी। क्रोध म वह तकियों को पीटने लगी। अपना सिर मखमली गद्दे पर पटकने लगी।

सेनापति धूड़सिंह जिसे कभी रसकपूर ने महाराजा से कहकर नौकरी से निकलवा दिया था, अपने हाथ में हथकड़ी लेकर आया। रसकपूर के

कमरे मे निधड़कता से घुसता हुआ बोला, मैं आपको गिरफ्तार करने आया हूँ। आपको सुनकर बड़ा दुख होगा कि आपकी सारी सम्पत्ति को जब्त करने के आदेश भी दिये जा चुके हैं।"

"तुम ! क्या तुम्हारा माथा फिर गया है ?"

"वह जमाना चला गया जब आपके पत्थर तैरते थे। महारानी सा, आपको बंद करने के हुक्म मिल चुके हैं।"

"मैं राजाजी से मिलना चाहती हूँ।"

"आप उनसे नही मिल सकती। आपको नाहरगढ़ के किले मे ले जाया जायगा।"

"नही नही, ऐसा न करिए। मुझे एक बार राजाजी से मिलने दीजिए, सेनापतिजी। मुझ पर दया कीजिए। मैं आपकी गाय हूँ।" वह रो पड़ी।

धूर्तसिंह ने उसकी कोई बात नही सुनी। उसके हाथो मे जबरदस्ती हथकड़ी डाल दी। उसे अपने साथ ले चला।

सीढ़ियाँ उतरते ही खिड़की पर महाराजा खड़े हुए दीख गए। रसकपूर क्रन्दन कर उठी, "राजाजी यह सब क्या है ? मुझे मेरा कसूर तो बताइए। राजाजी राजाजी, मैं आपकी गाय हूँ। ये सब लोग मुझे नाहरगढ़ ले जा रहे हैं।"

धूर्तसिंह ने उसे धक्का दिया। वह दीवार से जा टकरायी। महाराजा ने एक पल के लिए आंख बन्द कर ली। फिर घृणा से खखारकर थूक दिया। रसकपूर का आर्तनाद बढ़ गया, "मुझे बचाइए, राजाजी मुझे बचाइए किसी ने आपको कपट से ठग लिया है, अन्नदाता महाराज"

रसकपूर पीली पड़ गयी।

उसे तुरन्त पैदल ही पर्वत पर स्थित नाहरगढ़ के उस भयानक किले मे ले जाया गया जिसके तहखाने महाअपराधियो के लिए सुरक्षित रहते थे।

उसके कोमल पांवो से खून बह रहा था। चेहरा जर्द हो गया था।

होंठ सूख गये थे।

रत्नपुर रोते रोते थक गयी थी। थोड़ी ही देर पहले जो इस धरती की साम्राज्ञी थी जिसके हुक्म के बिना पत्ता तक नहीं हिलता था वह हथकड़ियों में जकड़ी बिलख रही थी, उसके रुदन पर लोग हँस रहे थे।

जब उसे नाहरगढ़ के भयानक अंधेरे तहखाने के फाटकों के समक्ष खड़ा किया गया तब वह भय से चीख पड़ी, नहीं ! नहीं ! मुझे इसमें मत डालो मैं आपके हाथ जोड़ती हूँ। मैं यहाँ से दूर बहुत दूर चली जाऊँगी।

ठाकुर चाँदसिंह ने जलते स्वर में कहा पातुर ! तूने जयपुर को दुःखों में डाल दिया है। यहां वीरों की जगह भड़वे भर गये हैं। तुमने सोचा कि महाराजा सदा तुम्हारे अपने रहेंगे। तुम समझती थीं कि तुमसे सुन्दर इस पृथ्वी पर दूसरी नारी नहीं होगी। क्या तुमने महाराजा के वे कारनामे नहीं देखे कि इन्होंने लड़कियों के पीछे जिस चाहा शासन सम्हाल लिया और जिसे चाहा वापस धक्का देकर निकाल दिया। तुम्हारा भी वक्त आ गया। सेनापतिजी हथकड़ी खोलकर इसे तहखाने में डाल दो। इसने बहुत से बेगुनाहों को मरवाया है अब इसे भी तहखाने में तड़प-तड़प कर भूखी-प्यासी मरने दो ताकि यह जाने कि मौत कितनी भयानक व पीड़ाजनक होती है।

नहीं नहीं नहीं। मुझे कोई बचाओ बचाओ।

आवाज तहखानों के बन्द होते फाटकों के साथ मर गयी।

एक और नूरजहाँ का पतन हो गया।



7

चौहान और पठान

"महाराज !"

"क्या है ?"

"दिल्ली से आया एक घुड़सवार आपकी सेवा में इसी समय उपस्थित होना चाहता है।"

"दिल्ली से आया घुड़सवार !" रणथंभोर गढ़ के शौर्य, शक्ति और धर्म की साक्षात मूर्ति महाराज हम्मीर चौहान चौंक पडे। वह अभी सिंहासन पर बैठे हुए थे। उनके पास उनके सेनापति, दीवान व दूसरे सरदार बैठे थे। उन्होंने पल भर के लिए उनकी तरफ देखा, फिर आने वाले पहरेदार की आकृति पर अपने आग की तरह चमकते लाल लाल नेत्र जमाते हुए पूछा, "वह सवार कौन है ?"

"अपने आपको एक बदनसीब सिपाही बता रहा है।"

'उसे आदर के साथ भीतर ले आओ।

जो पहरेदार आया था वह पुनः सलाम करके चला गया। सेनापति दीवान और हम्मीर की भकुटियाँ तन गयीं, उनकी आकृतियाँ और भी गम्भीर हो गई।

सेनापति ने अपनी कमर में लटकती तलवार की ओर देख कर कहा, 'महाराज खिलजी की तृष्णा दिन प्रति दिन बढ़ रही है। वह सारे राजपूताने को निर्दयता और निर्ममता से रौंदना चाहता है।'

हम्मीर ने अपनी मूछों को ऐंठते हुए कहा, 'अभी तक चौहानों तलवारों से नहीं टकराया है जिनके तप तेज, और शौर्य के सामने कोई आततायी नहीं ठहर पाया।"

तभी सिपाही उनके सामने उपस्थित हुआ। सिपाही लगभग ४० वर्ष का था। उसका शरीर बलिष्ठ और कद काफी लंबा था। उसने सिर झुकाकर प्रणाम किया और अत्यंत आदरसूचक शब्दों में कहा "शहंशाहे मजहब और ईमान मैं अकेले में कुछ अर्ज करना चाहता हूँ।'

हम्मीर ने हाथ ऊंचा करके संकेत किया। सेनापति, दीवान और दूसरे लोग उठ कर चले गए।

कहिए, क्या कहना चाहते हैं ?" हम्मीर ने कहा।

मैं आपकी शरण में आया हूँ। मेरे जानमाल की रक्षा कीजिए। मैं आपकी कदमबोसी करता हूँ।' कह कर आगंतुक ने हम्मीर के चरण पकड़ लिए।

हम्मीर सिंहासन से उठ गए। दीवार पर टंगी ढाल व तलवार की ओर देखकर उन्होंने गंभीर स्वर में कहा 'मैं आपका मतलब नहीं समझा जरा अपनी बात को साफ कीजिए फिर वह और कर बोले, 'अरे, आप खड़े क्यों हैं ? विराजिए न ? इस आसन पर तशरीफ रखिए।"

आगन्तुक ने टूटे हुए स्वर में बताया, 'मैं पठान जाति का एक वफादार सिपाही हूँ। मेरा नाम महिमशाह है। मैंने खिलजी की खिदमत बहुत ही वफा के साथ की। उसने मेरी वफाओं का बदला जफाओं से

दिया। मुझे और मेरे सारे कुनबे को उसने दीन बना दिया। दर दर का भिखारी और दाने दाने का मुहताज बना दिया। मुझे किसी ने शरण नहीं दी। क्योंकि खिलजी का यह परवाना मेरे पीछे-पीछे रहता है कि इसे जो पनाह देगा वह मेरा दुश्मन समझा जायगा। लाचार मैं अपने बाल-बच्चों बीवी व बूढ़ी मां को लेकर भूखा प्यासा इस बेरहम दुनियाँ में जगह जगह भटक रहा हूँ। अगर वफादारी का यही इनाम है तो थोड़े ही दिनों में वफादारी का नाम इस जमीन से उठ जाएगा। मैंने अपनी पूरी ताकत से खिलजी की शोहरत फैलाने के लिए कुरबानियां दी और उसने मुझे सिर्फ इसलिए अपना जानी दुश्मन समझ लिया कि एक बात पर मैं उससे रजामंद नहीं हुआ। चौहान राव, मैं आपके कदमों पर सिर झुका कर पनाह माँगता हूँ। सुना है राजपूत कौम शरण में आए दुश्मन को भी गले लगा लेती है।'

महिमशाह की आँखें भर आईं। वह उठा और उसने अपनी आँखें पोंछीं। अपने गले को साफ करता हुआ नजरें झुकाए हुए बोला 'मैं जाति का पठान हूँ। मेरे खून में एक सच्चे और वफादार पठान का खून है मैं खुदा की कसम खा कर कहता हूँ कि आप से कभी भी दगा नहीं करूँगा। मुझे पनाह दीजिए गरीब परवर, पनाह दीजिए।'

हम्मीर पल भर सोचता रहा। उन दिनों अलाऊद्दीन की शक्ति और शौर्य का आतंक चारों ओर फैला हुआ था। अत्यन्त ही बर्बर ढंग से वह राजस्थान के गौरव को कुचलने के लिए तुला हुआ था। राजपूताने के वीर भी उस आततायी और बिना कारण साधारण प्रजा को अपनी आक्रमणकारी अनिविधियों से पीड़ित करने वाले के प्रति रोष से भरे हुए थे। एक तरह से वे खिलजी की क्रूरता को समाप्त करने में संलग्न थे लेकिन वे स्वयं एक सूत्र में नहीं बंधे थे। उनमें संगठन नहीं था, इसलिए खिलजी का अत्याचार दिन प्रति दिन बढ़ रहा था। हम्मीर को भी खिलजी की शक्ति और सेना का ज्ञान था। फिर भी महिमशाह के करुण क्रंदन और विवशता ने उन्हें सचमुच झकझोर दिया। उन्होंने

खान, हम पनाह दी है तो आप हमारी हिफाजत भी करें। सिर्फ हम ही नहीं, दुनियाँ के सारे पठान आपके इस रहम के अहसानमन्द होंगे।

हम्मीर ने खिलजी को जवाब में कहला दिया 'हम अपने शरणागत को किसी कीमत पर आपके हवाले नहीं कर सकते।"

और इस उत्तर से खिलजी आग बबूला हो गया। उसने तुरन्त एक और हरकारा भेजा, जिसके द्वारा खबर दी 'इसका अन्जाम बहुत ही खौफनाक होगा। हम रणथमौर की ईंट से ईंट बजा देंगे।'

उत्तर में हम्मीर ने कहलवाया, "हम चौहान हैं। हम कोई काम अंजाम के अच्छे बुरे कारण से नहीं करते। हमने सदा शरणागतों की रक्षा की है और आज भी उसकी रक्षा जी जान से करेंगे। आप को जो कुछ करना है वह कर लीजिए।"

इस उत्तर के साथ ही हम्मीर युद्ध की तैयारियाँ करने लगा। खिलजी भी अपनी विशाल सेना के साथ रणथमौर की तरफ बढ़ा। रास्ते में घमासान युद्ध हुआ। खिलजी के पाँव उखड़ गए। कुछ दिन के लिए युद्ध में विराम आ गया। फिर दिल्लीपति की सेनाओं ने सम्पूर्ण शक्ति से हम्मीर पर आक्रमण किया। हम्मीर ने भी पूरी शक्ति से सामना किया। पर इस बार वह खिलजी को नहीं रोक सका और अन्त में खिलजी ने रणथमौर के किले को घेर लिया।

रणथमौर का किला अभेद्य और अटूट था। हम्मीर के इस किले को भेदना और विजय करना कठिन ही नहीं असमभव-सा था। खिलजी बार बार आक्रमण करता और बार बार मुह की खाता। महिमशाह का शौर्य भी देखते बनता था।

दिन पर दिन गुजरते गए महीने साल में बदल गए हठी और आततायी खिलजी रणथमौर को लेने के लिए तड़पता रहा, लेकिन वह

महिमशाह को आराम से बैठन का सकेत किया। फिर स्वय बाहर आए। अपने दीवान और सेनापति के सामने महिमशाह की समस्या रखी।

सेनापति, दीवान और राव हम्मीर बहुत देर तक वार्तालाप करते रहे। अन्त म सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया 'महिमशाह को शरण दे दी जाय। यह सच है कि इसका परिणाम अत्यत भयकर होगा, लेकिन यह पठान हमारी उदारता प्रेम और उत्सग हृदयगम करके आने वाली पीढी के लिए एक इतिहास तो छोड जाएगा कि एक पठान के लिए एक पूरी रियासत ने, राजपूताना के वीर चौहानों ने अपना सवस्व निछावर कर दिया।

हम्मीर ने आकर महिमशाह से कुछ कहना चाहा। महिमशाह उदास था। उसका मुख पीला पड गया था। उसने हम्मीर राव से बेचनी से पूछा, "महाराज!

हम आपको पनाह देंगे। हमारी शरण म आपकी पूर्ण सुरक्षा रहेगी।

महाराज! वह हम्मीर के आलिंगन म बध गया और बोला 'मैं पठान का बेटा हूँ। आपके लिए सब कुछ कुरबान कर दूंगा। मेरी जान चली जाएगी लेकिन आपकी शान को बट्टा न लगने दूगा।

हम्मीर न उसे अपने आलिंगन स अलग करके कहा, 'अब आप आराम स हमारे महल में रहिए। आज से आप हमारे शरणागत ही नहीं भाई भी हैं।

तीन दिन बीतते बीतते अलाउद्दीन खिलजी का दूत सदेश लेकर आ गया। सदेश म कहा गया था कि आप महिमशाह को पनाह न दें। उसे हमारे हवाले कर दें और उसी दिन महिमशाह की बीबी ने ने राव चौहान स मुलाकात करके परदे के पीछे से प्रार्थना की कि भाई-

खान, हम पनाह दी है तो आप हमारी हिफाजत भी करें। सिर्फ हम ही नहीं, दुनियाँ के सारे पठान आपके इस रहम के अहसानमंद होंगे।

हम्मीर ने खिलजी को जवाब में कहला दिया "हम अपने शरणागत को किसी कीमत पर आपके हवाले नहीं कर सकते।

और इस उत्तर से खिलजी आग बबूला हो गया। उसने तुरन्त एक और हरकारा भेजा, जिसके द्वारा खबर दी 'इसका अन्जाम बहुत ही खौफनाक होगा। हम रणथमौर की ईंट से ईंट बजा देंगे।'

उत्तर में हम्मीर ने कहलवाया 'हम चौहान हैं। हम कोई काम अंजाम के अच्छे-बुरे कारण से नहीं करते। हमने सदा शरणागतों की रक्षा की है और आज भी उसकी रक्षा जी जान से करेंगे। आप को जो कुछ करना है वह कर लीजिए।'

इस उत्तर के साथ ही हम्मीर युद्ध की तैयारियाँ करने लगा। खिलजी भी अपनी विशाल सेना के साथ रणथमौर की तरफ बढ़ा। रास्ते में घमासान युद्ध हुआ। खिलजी के पाँव उखड़ गए। कुछ दिन के लिए युद्ध में विराम आ गया। फिर दिल्लीपति की सेनाओं ने सम्पूर्ण शक्ति से हम्मीर पर आक्रमण किया। हम्मीर ने भी पूरी शक्ति से सामना किया। पर इस बार वह खिलजी को नहीं रोक सका, और अन्त में खिलजी ने रणथमौर के किले को घेर लिया।

रणथमौर का किला अभेद्य और अटूट था। हम्मीर के इस किले को भेदना और विजय करना कठिन ही नहीं असम्भव-सा था। खिलजी बार बार आक्रमण करता और बार बार मुंह की खाता। महिमशाह का शौर्य भी देखते बनता था।

दिन पर दिन गुजरते गए महीने साल में बदल गए, हठी और आततायी खिलजी रणथमौर को लेने के लिए तड़पता रहा, लेकिन

सफल नहीं हो सका, उसने एक बार फिर हम्मीर से कहलाया कि आप हमें महिमशाह को सौंप दें हम अपनी फौजें वापस कर लेंगे लेकिन हम्मीर ने इस प्रस्ताव को एकदम ठुकरा दिया। हालांकि रणथभौर के विनाश की कल्पना करके स्वयं महिमशाह ने कहा था 'आप एक पठान के लिए अपने इतने इन्सान क्यों मरवाते हैं? अब मैं आपसे हाथ जोड़कर कहता हूं कि आप मुझे खिलजी के हवाले कर दीजिए।'

हम्मीर ने उसे सीने से लगाकर कहा 'दोस्त इतिहास सदा कहेगा कि एक बादशाह एक पठान के खून का प्यासा था और एक चौहान राव उसकी रक्षा के लिए खून बहाने को तैयार था।'

खिलजी ने फिर आक्रमण किया और बहुत जोरदार आक्रमण किया। लेकिन यह आक्रमण भी दूसरे आक्रमणों की भांति असफल रहा।

और अन्त में खिलजी हताश सा हो गया। करे तो क्या करे?

तभी उसके सिपहसालार ने उसके सामने एक ऐसे आदमी को पेश किया जो किले का गुप्त मार्ग जानता था। सदा देशद्रोहियों ने ही देश को तबाह किया है और गौरव को कलंकित। खिलजी ने उस आदमी को (जिसका नाम लेखक देशद्रोही रख रहा है) रणथभौर का शासक बनाने का प्रलोभन दिया। देशद्रोही जो एक मामूली सिपाही था शासक बन जाने के लालच में पागल हो गया। उसने एक रात किले की सुरंग का पता बता दिया। खिलजी की सेना युद्ध के नियमों और मर्यादाओं का उल्लंघन करती हुई गढ़ में प्रवेश कर गई।

चौहानों की एक टुकड़ी ने खिलजी की विशाल सेना को गाजर मूली की तरह काटना शुरू कर दिया। सारी खिलजी सेना में त्राहि त्राहि मच गई। एक ओर हम्मीर और दूसरी ओर महिमशाह पठान दोनों इतनी प्रबलता और कुशलता से लड़ रहे थे कि खिलजी के सैनिक चाह कर भी उन स्थानों पर कब्जा नहीं कर सके जो रण की दृष्टि से महत्वपूर्ण थे।

रात बीत गई।

खिलजी की सेना आगे नहीं बढ़ सकी तब उसने अत्यन्त निर्दयता से

अपनी सेना को अधाधुंध मौत के मुंह में झोंकना शुरू कर दिया। उसके सैनिक कीड़े मकोड़ों की तरह मरते रहे पर तीसरे दिन युद्ध की स्थिति बदल गई। हम्मीर का अंग अंग जख्मी हो गया था। महिमशाह की भी एक हाथ की दो अंगुलियां कट गई थीं।

दोपहर का सूर्य चमक रहा था। आकाश बहुत ही निर्मल था। खिलजी की सेना किले में घुस गई थी। किले में हर एक कोने में भयंकर युद्ध हो रहा था। बच्चा बच्चा अपनी मातृभूमि के लिए लड़ रहा था। स्त्रियाँ घायल सैनिकों का उपचार करके उन्हें पुनः युद्ध के लिए प्रेरित कर रही थीं। वे देख रही थीं कि किसी भी वीर की पीठ में कोई घाव नहीं है। वे उत्साह से भर जाती थीं। गर्व से उनका मस्तक ऊँचा हो जाता था।

खिलजी के चुने हुए योद्धा इस लड़ाई में मारे गए।

राव हम्मीर अन्त में शत्रुओं से घिर गए। वे अकेले थे और शत्रु के सिपाही पचास। वे भी खिलजी के चुने हुए योद्धा।

हम्मीर की तलवार बिजली की तरह चल रही थी। उसके सैनिकों की संख्या बराबर कम होती जा रही थी। अचानक हम्मीर का एक हाथ कट गया। उस हाथ में हम्मीर का खड्ग था। अब हम्मीर निहत्था हो गया था। निहत्था हम्मीर भूखे बाघ की तरह झपटा और उसने एक शत्रु की तलवार छीन ली। एक हाथ से लहूलुहान हम्मीर शत्रुओं का विनाश करने लगा। इधर महिमशाह की वीरता की वीरता से ही उपमा दी जा सकती थी। वह वफादार पठान जान हथेली पर लिये लड़ रहा था। कितना उन्मत्त शौर्य और कितना महान उत्सर्ग।

अन्त में वह क्षण आया जिस क्षण की हर महान त्यागी वीर को प्रतीक्षा रहती है युद्ध करते-करते वीर गति को प्राप्त करना। हम्मीर वीर गति को प्राप्त हो गये। महिमशाह गिरफ्तार हो गया।

रणथंभौर का किला खिलजी के हाथ लगा, पर चित्तौड़ की तरह ही—एकदम उजाड़ और वीरान।

खिलजी ने देखा कि मुश्किल से पाँच-सात सैनिक ही जीवित पकड़े गए हैं। स्त्रियाँ और बच्चे न जाने किस अनजाने रास्ते से बाहर चले गये, यह वह नहीं जान सका। किले की गली-गली और ईंट ईंट खून से रंगी थी। घायलों की चीखपुकार युद्ध की भयानकता और तानाशाहों की बर्बरता की कहानी सुना रही थी। कहीं-कहीं आग श्मसान भूमि की तरह जल रही थी। कितना करुणामय वीभत्स दृश्य था। मानो युद्ध से विध्वस्त कण-कण कराह रहा था।

खिलजी यह सब देखकर एक बार काँप उठा और न जाने क्यों एक उन्मादपूर्ण अट्टहास करने लगा कि सब आश्चर्य से उसे देखते रहे। सब को शंका हुई कि क्या जहाँपनाह पागल हो गये हैं?

दूसरे दिन सुबह।

खिलजी के सम्मुख अपराधी के रूप में महिमशाह को पेश किया गया। पास ही अभिमान में अकड़ा देशद्रोही खड़ा-खड़ा मूँछों पर ताव दे रहा था। महिमशाह ने उसके पास आते ही खखार कर उसके मुँह पर थूका और कहा हरामी कुत्ते तुमसे तो जानवर ही अच्छा।'

देशद्रोही सकपका गया।

खिलजी ने हथकड़ियों में बँधे महिमशाह से कहा पठान तुम्हारा अन्तिम समय नजदीक आ गया है। तुम्हारी आखिरी ख्वाहिश क्या है? हम तुम्हारी आखिरी ख्वाहिश पूरी करना चाहते हैं।'

मेरी आखिरी ख्वाहिश यही है कि मुझे थोड़ी देर के लिए छोड़ दिया जाए।'

क्यों? तुम आजाद होकर क्या करना चाहते हो?

मैं तुम्हें और इस गद्दार को मौत के घाट उतारना चाहता हूँ।'

हम तुम्हें माफ कर सकते हैं अगर तुम अब भी हमारी गुलामी कबूल

कर लो।'

"थू है तुम पर, अगर मुझे जिन्दगी रहते कोई भी मौका मिलेगा, मैं तुम्हारी बोटी बोटी काट दूंगा। नरिंद जमाना इस पठान पर किए गए एक चौहान का एहसान नहीं भूलगा। पठान का बच्चा बच्चा हमेशा इस कुरबानी को याद रखेगा। और याद रखेगा तुम्हारी जगखोरी आदतों को।

'खामोश" खिलजी बोल पड़ा, 'इसे सजाए मौत दे दी जाए।"

लेकिन महिमशाह ने अपनी मौत के पहले एक और मजर देखा कि देशद्रोही का माथा जमीन में गाड़ दिया गया है। गरदन के बाद उस पर शिकारी कुत्त छोड़ दिए गए हैं।

और वह 'मेरा इनाम, मेरा यह इनाम' चिल्ला रहा है और खिलजी बहुत हँसी हसते हुये कह रहा है जो अपने मालिक का नहीं हो सका वह हमारा क्या होगा ? गद्दार की इतनी ही दर्दीली मौत होना चाहिए।"

और महिमशाह की गर्दन तलवार के नीचे आने के लिये गर्व से तन गई।

[इस कहानी का सर्वाधिकार 'सरिता' मासिक के पास है]



मुक्ति

दूर से धूल के बादल उमडते हुए दिखाई पडे । प्रख
सूर्य रश्मियाँ उन बादलों को और स्पष्ट कर रही थी।
देखते देखते किले की ओर एक साडनी (ऊँटनी) आती हुई
दिखाई पडी । साडनी पर एक सवार था जो क्षत्रिय सनिक
लगता था । देखने मे वह अत्यन्त बलिष्ठ और खूब्वार लग
रहा था ।

वह बीकानेर नरेश राव दलपतसिंह के हुजूर में
हाजिर हुआ । दलपतसिंह जी अपनी राठोडी मूछों पर ताव
देते हुए बोले 'क्या बात है, रूपाराम ? तुम दिल्ली से
कब आये ?

खम्मा अन्नदाता ! देशद्रोही आपका भाई सूरसिंह
बादशाह जहाँगीर की मदद से बीकानेर पर आक्रमण करने
आ रहा है । उसके संग जावदखाँ पचास हजार फौज
के साथ है ।

दलपतसिंहजी तुरन्त गम्भीर हो गये। अपने गले में पहने उज्जवल मुक्ताओं के हार को क्रोध से तोडते हुए वे बोले, "हम इसकी कोई चिंता नहीं। हम अपनी मातृभूमि के लिए हँसते हसते अपने प्राणों को उत्सर्ग कर देंगे।" और उन्होंने उसी क्षण अपने दीवान, सेनापति और अन्य उमराव सरदारों को एकत्र किया और सारी स्थिति समझायी।

युद्ध के नाम से राजपूत लोग उत्साह और उमंग से भर उठे। शत्रु को कुचलने के लिए जोर शोर से तैयारियां होने लगी। चारणों के नये गीत आग उगलने लगे। सेनाएं कूच करने लगी। दलपतसिंहजी स्वयं सेना का संचालन कर रहे थे।

मुकाम छापर के सन्निकट दोनों सेनाओं के बीच युद्ध हुआ। खून की नदियाँ बह उठी। राजपूतों की रक्त प्यासी तलवारों ने मुगलों के दांत खट्टे कर दिये। सारा क्षेत्र लहूलुहान हो गया। जावदीखां को दलपतसिंहजी ने ऐसी पराजय दी कि वह मैदान छोडकर भाग गया।

विभीषण ने सोने की लंका को ढहाया था। जावदीखां ने तो मैदान छोड दिया लेकिन सूरसिंह ने भागते हुए मनिकों को ललकारा। वह फिर मैदान में आ डटा। दलपतसिंहजी हाथी पर सवार थे। उनके साथ खुद के ठाकुर बैठे थे जो सूरसिंहजी से मिले हुए थे। मौका मिलते ही ठाकुर ने दलपतसिंहजी को पकडवा दिया।

अपने खड्ग से पृथ्वी को कँपा देने वाले दलपतसिंह अजमेर के किले में बन्द कर दिये गये। उनके चारों ओर सख्त पहरा था। सौ सिपाही हर घडी चौकस रहते थे। किले की बंद पत्थर की दीवारों में उस वीर का अन्तस पखहीन पक्षी की भाँति तडप रहा था। खुले नीले आकाश की ओर देखकर उनकी आँखें स्वाधीनता के लिए भर भर आती थी, लेकिन कौन जहाँगीर की सत्ता से लोहा लेता? किसमें इतनी हिम्मत थी कि पिंजरे में बन्द शेर को छुडा लाता? लेकिन दलपतसिंहजी मुक्त होने के लिए प्राणपण से कटिबद्ध थे। धीरे धीरे उन्होंने कुछ पहरेदारों को अपने साथ मिला लिया था। उनसे अजमेर और पूरे राजपूताना की

हलचल का अच्छी तरह ध्यान रखते थे।

एक दिन नव उदास शाम घिरी थी। पल नीरव और निस्पन्द थे। संध्या की रक्ताभ किरणें किले की प्राचीरों के पीछे ढल रही थीं। अप्रत्याशित भोजन का थाल लेकर आने वाले रसोइये ने अर्ज किया, 'खम्मा अन्नदाता! मारवाड़ के हठीसिंह नाम के चम्पावत सरदार अजमेर पधारे हैं।"

'वे कहाँ जा रहे हैं?"

वे अपनी सुसराल जा रहे हैं।

क्या वे नितान्त अकेले हैं?'

'नहीं, अन्नदाता।'

'उनके साथ कौन-कौन है?"

"दो सौ सवार और दो सौ पैदल।"

दलपतसिंह अत्यन्त गम्भीर हो गये। बन्दीगृह के जीवन मे रहते रहते उनके मुख का ओज चला-सा गया था। दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए वे बोले "आप जाति के ब्राह्मण हैं। ब्राह्मण ने सदा क्षत्रियों की सहायता की है। विप्र का ससर्ग सदा धर्म के लिए हुआ है। आप मेरा एक काम करेंगे?

अन्नदाता का हुक्म सिर आँखों पर। अगर इस गरीब ब्राह्मण की चमड़ी की जूती बनाकर भी आप पहन लेंगे, तो मैं अपना अहोभाग्य समझूँगा।

किले में तिमिर घुस आया था। मशालची ने आकर मशाल जला दी। उसके कांपते प्रकाश में दलपतसिंहजी ने कहा, 'आप मेरे देवता हैं। आप हठीसिंहजी को कहिए कि बीकानेर नरेश आपसे मुजरा करना चाहते हैं।

'मैं आपका सन्देशा अभी उनके पास पहुँचा दूंगा।"

'और उत्तर कब देंगे?"

'कल सुबह जब मैं आपके लिए दूध लाऊँगा।'

"मैं जीवित रहा, तो आपको इस उपकार का बहुत बड़ा पुरस्कार दूंगा।"

ब्राह्मण चला गया। शनै शनै दिगन्तव्यापी निस्तब्धता में रात डूब गयी। चिन्ताओं से आवृत दलपतसिंहजी नहीं सो पाये। कैसे भाग्यहीन हैं वे कि एक पूरे राज्य के स्वामी होकर यहाँ बन्दी हैं—नितान्त असहाय प्राणी की भाँति।

रात आँखों में व्यतीत हो गयी।

प्रात समीर उनमें कुछ ताजगी भर गया। पाठ-पूजा से निवृत्त होते ही ब्राह्मण दूध लेकर आया।

"चम्पावत सरदार ने क्या कहा विप्रवर?"

ब्राह्मण का सिर झुक गया। निराशा से उसका सारा मुख ढँक गया। पाषाण प्रतिमा की तरह खड़ा रहा निश्चल। दूध का गिलास हाथ में ही रहा।

"आप चुप क्यों हैं?"

"चम्पावत सरदार ने फरमाया है कि मैं ससुराल से लौटते हुए आपसे भेंट करूँगा।"

दलपतसिंह जी भर भर आये। विगलित स्वर में दीवार की ओर अपलक देखते हुए बोले, "सुख के सब साथी होते हैं। जब प्राणी का दुर्भाग्य घेरता है, तब उसकी परछाईं भी उससे विलग हो जाती है। सरदार से आप कहना कि दलपतसिंहजी ने फरमाया है कि मुझ भाग्यहीन से आप क्या मिलने आयेंगे? आप स्वतन्त्र हैं। स्वतन्त्रता में आप साँस लेते हैं। आपका हर कदम स्वतन्त्र है। और मैं एक क्षत्रिय होकर, एक राज्य का स्वामी होकर बन्दीगृह में पराधीनता का जीवन जी रहा हूँ। मुझे मृत्यु के समय यही दुःख-सन्ताप होगा कि मुझ-जैसा एक वीर क्षत्रिय के पृथ्वी पर होते हुए बन्दीगृह में मर गया।"

ब्राह्मण ने बहुत अनुरोध किया पर दलपतसिंहजी ने दूध नहीं पिया। दुःसह ... में उनकी आँखों की गहराई में दहक उठा, स्फुलिंग-सा।

वे निष्प्राण-से बैठे रहे। मिल की दीवारों को देखते रहे और सोचते रहे 'यह राज्यलिप्सा प्राणी को कितना पतित और नीच बना देती है।

× × ×

ब्राह्मण ने जाते ही चम्पावत सरदार को दलानसिंहजी का पुन सन्देशा सुनाया।

मेजबान की हवेली बहुत बड़ी थी। हठीसिंह ने अभी अमल (अफीम) खाया था। उसका नशा उनके रोम रोम में उत्साह और जोश भर रहा था। चाकर ने आकर निवेदन किया, "सरदार की जय! एक ब्राह्मण आपसे अभी मिलना चाहते हैं। वे कह रहे हैं कि एक अत्यावश्यक अर्ज करनी है सरदारजी से।

'उन्हें सम्मान सहित लाया जाय।' कहकर वे हुक्का पीने लगे। बैठकखाने में इत्र की सुगन्ध आ रही थी। दीवारों पर तलवारें और ढालें लटक रही थीं।

मखमली गद्दे पर गाव तकिये के सहारे अधलेटे थे हठीसिंह। आजानुबाहु, प्रशस्त वक्ष, गोरा रंग, साढ़े छह फुट लम्बाई, कानों को स्पर्श करने वाली मूँछें जिन पर वे अमल के हलके उन्माद में कभी-कभी नींबू का रस देते थे। नींबू उनकी मूछों के बाल पर टिक जाता था और वे मानो सावधानी से ताव एवं जोर का ठहाका लगा देते थे।

ब्राह्मण ने प्रवेश करते ही कहा, 'जुहारा कबूल हो।'

'आइए ब्राह्मण देवता! कोई नया सन्देशा लाये हैं?'

ब्राह्मण ने इधर उधर देखा। हठीसिंह के सारे साथी चम्पत हो गये। प्रश्न उनकी आँखों में तैर आया।

"ब्राह्मण देवता का आसन दिया जाय।" तुरंत एक दास ने उन्हें आसन दिया। ब्राह्मण उस पर बैठ गये।

"अज है, अन्नदाता।' वे रुक गये।

"कहिए, कहिए आप निश्चिन्त होकर कहिए, ये सब अपने ही हैं। गौरवशाली क्षत्रिय कुल सूर्य!"

ब्राह्मण ने दलपतसिंह की सारी वेदना और व्यथा अपने स्वर में घोलकर हठीसिंह को सुना दी। जैसे ही ब्राह्मण ने अपना बयान खत्म किया वैसे ही हठीसिंह के तेजस्वी चेहरे पर एक अद्भुत आलोक दीप्त हो उठा। अपने आपसे बोले, 'एक क्षत्रिय की ऐसी दुर्गत! एक वीर की ऐसी कायर मौत!"

"अन्नदाता! मैं ब्राह्मण हूँ। मैं यह भलीभांति जानता हूँ कि इस तरह का सन्देशा लाना लेजाना अपराध है लेकिन एक सूरमा को मैं इस तरह कलपते बिलखते नहीं देख सकता। मृत्यु निश्चित है। उसके आने का क्षण अमिट है। फिर किसी स्वतन्त्रता प्रेमी और अपने ही भाइयों द्वारा षडयन्त्र में फँसाये हुए वीर को क्या नहीं मुक्ति दिलायी जाय? यह श्रेष्ठ कार्य आप जैसे वीरों का ही धर्म है।'

हठीसिंह का क्षत्रिय धर्म जाग उठा। मूछों पर बल देते हुए बोले, 'बीकानेर नरेश को वह दीखियगा कि हठीसिंह ससुराल बाद में जायेगा, पहले आपको मुक्त करायेगा।

ब्राह्मण प्रसन्नता में डूबा हुआ चला गया।

हठीसिंह ने एकान्त की इच्छा प्रकट की। सभी साथी चले गये। बैठकखाने में घोर एकान्त व्याप्त हो गया। हठीसिंह को लगा कि बैठकखाने की हर वस्तु पर एक विचित्र सी जड़ता छा गई है। वह जड़ता होले होले उन्हें घेरने लगी। वे ससुराल जा रहे थे। उनकी पत्नी व्यग्रता से उनकी प्रतीक्षा कर रही होगी। उनकी पत्नी चाँदनी में स्नान की हुई काई परी ही समझो। अनुपम ज्योतित अंग प्रत्यंग। बड़े बड़े लोचन, जैसे मादकता के सागर हों।

एक मधुर स्मृति चित्र उनके मन पर उतर आया—

'मैं अपने पीहर जा रही हूँ, ठाकुर सा! आप जाया होते ही मुझ

लने आ जाइएगा।

अपनी बाँहों मे अपनी पत्नी को आबद्ध करके ठाकुर हठीसिंह बोले 'हम तो एक पल भी आपके बिना नही जिता सकते, ठकुराणी सा! आप नही जानती कि ये रातें आपके बिना कितनी लम्बी हो जायेंगी हम आपका सन्देश पाते ही आपको लेने के लिए आ जायेंगे।'

अप्रत्याशित लाज से ठकुराणी के कपोल रक्तिम हो उठे, बडी बडी आँखो मे एक आमन्त्रण सजीव हो उठा। ठाकुर को महसूस हुआ कि उनका तन मोम की तरह पिघल रहा है। थोडी देर म वे तरल-पदार्थ की तरह बह जायेंगे।

भावुकता से बोले 'ठकुराणी सा आपका वियोग मेरे लिए असह्य है। जल्दी आने की चेष्टा कीजिएगा।'

ठकुराणी के अधर मन्द मुस्कान म डूब गये। उनकी बाँहो से मुक्त होकर वह प्रकोष्ठ मे आ गयी। पीछे पीछे चले आये हठीसिंह। विभावरी अपने पूर्ण यौवन पर थी। ऐसा प्रतीत होता था कि आकाश गगा पूर्ण वेग स प्रवाहित हो रही है। उन पर अनिमेष दृष्टि जमाती हुई ठकुराणी बोली "यह सब ईश्वर के अधीन है। क्या बच्चा होगा, मैं क्या जानू? पर आप मेरा सन्देशा पाते ही मुझे ससम्मान लेने आ जाइयेगा।

यदि आपके पुत्र हुआ तो मैं आपको शाही सम्मान से लेने आऊँगा। दो सौ सवार और दो सौ पदल! आपके पीहर वाले भी देखेंगे कि क्या शाही ठाकुर है हमारा दामाद।' व अकड से गये।

दूरागत कोई रात्रि पखेरू बोल रहा था। एक उल्लू पख फडफडाता हुआ प्रकोष्ठ के आगे से गुजर गया। रात और गहरी हो गयी। और मौन हो गयी। और धामी चाल से ढलने लगी।

दोनों समाधिस्थ स खडे प्रकृति का इस अावपक नाम लीला को देखते रहे।

और यदि लडकी हुई तो।'

'एसा नहीं हो सकता। हमारे लडका ही होगा। ठकुराणी, हमारे

ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की है कि हमारे पुत्र होगा।" ठाकुर का वक्ष गर्व से फूल आया।

"फिर आप मुझे जल्दी से जल्दी लेने आइएगा।"

"वचन देता हूँ कि सन्देशा पाते ही आ जाऊँगा।"

स्मृति चित्र खण्डित हो गया।

रानी को वचन दिया था पर बीकानेर नरेश से मिलना भी अति आवश्यक है। एक राजपूत के लिए पहला धर्म होता है पराये दुख को मिटाना, पराई पीर को हरण करना। लेकिन भाग्य ने कोई विकट और अनहोना खेल कर दिया तो? हठीसिंह मन ही मन काँप उठे। उन्हें या लगा, जैसे उनके आगे के सारे रास्ते टूट गये हैं। एक उजाड़ प्रान्तर विस्तृत हो गया है। दूर दूर तक सन्नाटा छाया हुआ है। ऐसी निर्जनता मे एक औरत एक फूल से कोमल बच्चे को गोद म लिये हुए खड़ी है। एक अकेली औरत! वह औरत है उनकी अपनी पत्नी अपने नवजात शिशु को लिये हुए।

ठाकुर विगलित हो गये। कैसी कठिन परीक्षा है! लेकिन मैं क्षत्रिय हूँ। आपद म फँसे हुए किसी क्षत्रिय की रक्षा करना ही मेरा पहला धर्म और कर्तव्य है। उन्होंने अपने मन आँगन से अपनी पत्नी के चित्र को मिटा दिया।

अपनी गर्दन को जोर का झटका देकर वे उठे। बैठकखाने मे अभी जड़ता को अपनी चुटकियों से उड़ाते हुए उन्होंने एक हुंकार भरी और अपने आप निर्णय लिया, 'मुझे बीकानेर नरेश की मदद करनी ही चाहिये।'

उन्होंने अपने विश्वसनीय साथियों को तुरन्त बैठकखाने में बुलाया। अमल की मनवार फिर शुरू हो गई। एक एक गोली अमल की चखाने के उपरान्त हठीसिंह ने स्नेह भरे स्वर म कहा "वैसे तो मैं आपका स्वामी हूँ। मेरी आज्ञा का पालन करना ही आप सब का धर्म है किन्तु मैं, परामर्श के बिना कोई काम करना नहीं चाहता।" और उन्होंने

सिंह जी की सारी स्थिति विस्तृत रूप से अपने साथियों के समक्ष रख दी। अपनी बात को समाप्त करके हठीसिंह ने कहा, "बीकानेर नरेश एक कुशल सैन्य संचालक और अत्यन्त वीर योद्धा हैं। षडयन्त्र और मुगलिया सल्तनत की अपार शक्ति ने उन जैसे शूरमा को बन्दी बना लिया है। उन्होंने हमसे मुक्ति की प्रार्थना की है। आपकी क्या राय है?

क्षण भर के लिए वातावरण गम्भीर बन गया।

उस गम्भीर मौन को तोड़ा उनके साथी महावीर सिंह ने। वह बोला "हम सब नियति के हाथों के खिलौने हैं। कब टूट जायें, यह कोई नहीं जानता। राजपूत को ऐसा पर्व बहुत ही कठिनता से प्राप्त होता है। एक वीर की मुक्ति एक देश के मुक्ति के बराबर होती है, क्योंकि वीर ही पृथ्वी और निर्दोष लोगों कि रक्षा करते हैं। वीर ही जन्मभूमि को खण्डित होने से बचाते हैं और वीर ही अमानुषिक अत्याचारी और निर्दयी आक्रमणों से देश की रक्षा करते हैं। ऐसे वीरों की मुक्ति के लिए समस्त देश को बलिदान हो जाना चाहिए।'

मुझे आप लोगों से यही आशा थी। कल ही हम बीकानेर नरेश को मुक्त करायेंगे।'

सब साथी हर्षोल्लास में चले गये। हठीसिंह ने अपनी ठकुरानी को पत्र लिखा 'सिध श्री अजमेर शुभ सुथाने लिख कुंवर ने लिखी पिता हठीसिंह की आशिष पढ़ना। हम सब अजमेर में बहुत ही कुशल हैं। उपरन्त खास बात यह है कि हम यहाँ नये वचनों में बँध गये हैं। यह नये वचन प्राचीन वचनों से बहुत ही बड़े और अधिक महत्वपूर्ण हैं। बीकानेर नरेश यहाँ बन्दी का जीवन यापन कर रहे हैं। उन्होंने मुझसे अपनी मुक्ति की कामना प्रकट की है ठकुराणी सा'! मैं क्षत्रिय हूँ। एक छोटा सा ठाकुर। एक पूरे राज्य का स्वामी मुझसे अरदासना कर रहा है। पता नहीं उनकी मुक्ति न जाने कितनों की मुक्ति बन सकती है। मृत्यु एक न एक दिन सभी को आयेगी ही, किन्तु पर हिताय मरना ही क्षत्रिय का प्रथम और श्रेष्ठ धर्म है। पता नहीं कल क्या होगा?

जीवित रहे, तो जरूर मिलेंगे अन्यथा आपको मेरी प्रार्थना है कि आप कुंवर सा को एक सच्चा वीर और धीर प्राणी बनाना। कुंवर को हजारों आशिष और आपको उसकी सार सम्हाल!

पत्र दूत के हाथ में दे दिया। दूत देखते देखते विदा हो गया। हठी सिंह की आंखें अश्रुपूरित हो गई।

वह दिन और रात हठीसिंह की आखों में ही बीती। हठीसिंह—एक इंसान अपनी पत्नी और अपने पुत्र से मिलने के लिए तड़पता रहा। समस्त मानवीय दुर्बलताएं उसे घेरती रहीं। पत्नी का असीम प्रेम और पुत्र का प्रथम दर्शन! सचमुच यह बहुत ही भाग्यहीन है। अनेक उतार-चढ़ाव और विचित्र उधेड़बुन!

× × ×

और नया सवेरा हुआ। नितान्त ताजा और स्वस्थ सवेरा! हठी सिंह का इंसान उनकी वीरता के गौरव के नीचे दब गया। वे उठे। उन्होंने स्नानादि से निवृत्त होकर पूजा किया। ग्रंथ वन्दना समाप्त करके ब्राह्मणों को बुलाया। श्रद्धा से उन्हें नमस्कार करके दान पुण्य किया।

फिर अपने साथियों को बुलाकर आह्वान किया, "हम वीर हैं। हमारा जीवन तलवार की नोक पर रहता है। तलवार की धार पर चलना और लोहे के चने चबाना ही हमारा कर्म है। हम अपने एक योद्धा वीर को शत्रु की कारा से मुक्त कराना है। उनकी मुक्ति ही हमारे जीवन की सफलता और सार्थकता है। हम ऐसे योद्धा का कदापि बन्दी गृह में नहीं मरने देंगे जो शत्रु के दांत खट्टे कर सकता है।"

सभी साथियों ने खड्ग भवानी को नमस्कार करके प्रतिज्ञा की कि हम बीकानेर नरेश की मुक्ति के लिए हँसते हँसते उत्सर्ग हो जाएंगे।

और हठीसिंह अपने दो सौ पदल और दो सो सवार बहादुरों को लेकर अजमेर के किले पर टूट पडा। इस अप्रत्याशित आक्रमण ने मुगल सिपाहियों को हक्का बक्का कर दिया। उनमे भगदड मच गई। व इस बात का भी अनुमान नही लगा सके कि आक्रमणकारी कितने हैं? बस घबराकर तितर बितर हो गए। तुरंत अजमेर के सूबेदार को इस हमले की सूचना दी गई। अजमेर का सूबेदार अपनी चार हजार फौज लेकर आया तब तक हठीसिंह ने बीकानेर नरेश दलपतसिंहजी को मुक्त करा लिया था।

हठीसिंह से गले मिलते हुए बीकानेर नरेश ने कहा, "हम आभारी हैं चम्पावत सरदार आपके। हमारा देश भी कृतज्ञ रहेगा आपका। बीकानेर से आपका कोई लगाव नही है कोई सम्बन्ध नही है फिर भी आपने बीकानेर नरेश के लिए जो आहुति दी और प्रयास किए वह सब बीकानेर के इतिहास म स्वण अक्षरो म लिखा जायगा।

' आप तैयार हो जाइये। शत्रु यहाँ धावा जरूर बोलेगा। '

महावीरसिंह ने आकर समाचार दिया, ' हम शत्रु ने चारो ओर से घेर लिया है।

"कोई चिन्ता की बात नही। समझ लो कि हमने केसरिया बाना पहन लिया है। जब तक रक्त की एक बूँद भी रहे हम शत्रु से लड़ते रहेंगे। हर हर महादेव!

फिर घमासान युद्ध आरम्भ हो गया।

चार सौ राजपूत मुक्ति के लिए चार हजार सेना पर टूट पड़े। नरमुण्डों के ढेर लगने लगे। खून की नदियाँ बहने लगी। घोडों की हिनहिनाहट। से सारा नभमण्डल गूज उठा। राजपूतों का शौर्य देखते बनता था। गाजर मूली की तरह शत्रु की सेना को काट रहे थे वे।

एसा प्रतीत होता था कि य राठौड राजपूत एकत्र हो जायें, तो देश से मुगलिया शासन ही समाप्त कर दें।

धराशायी होते-होते चार राजपूत एक एक करके वीरगति को प्राप्त

हो गये। अजमेर सूबेदार के भी चुने हुए योद्धा मारे गए। चार सौ ने उनकी सेना के एक हिस्से का ही बाकी रखा था। वह हठीसिंह की वीरता पर गदगद हो गया। वह हजारा नरमुण्डो के बीच खड़ा था। फटे हुए सिर, हाथ-पर, धड़! क्षण भर के लिए वह युद्ध की विभीषिका से सिहर उठा 'उफ! जग कितनी खौफनाक घोर हैवानियत से भरी होती है। फिर वह दलपतसिंहजी व हठीसिंह की लाश देखने के लिए बढा।

शत्रुओ की लाशो के बीच दानों की लाशें पास-पास पडी थी। दोना की छुरियाँ एक दूसरे के सीने क आर पार थी, मानो व दोना वीर शत्रु के हाथ से नही मरना चाहते थ। सूबेदार का मस्तक न जाने क्यो झुक गया? वह अपने अश्रु पोछने लगा।





एक नयी रावणा

रावणा श्रान्त-क्लान्त सी पलंग पर जा पड़ी। अपने अनुपम सौन्दर्य को अपनी गोरी गोरी मेंहदी रची हथेलियों में छुपा कर वह बहुत देर तक उन्मन और निस्पन्द पड़ी रहा।

गगन छूती सी हवेली के नक्काशीदार पत्थरों के खम्भों वाले गवाक्ष में वह फिर आई। खम्भों पर बेल-बूटे कढ़े हुए थे। मटमैला अँधेरा जैसलमेर के किले को स्पर्श करता हुआ नगर पर विस्तृत होने लगा था।

उसकी दासी ने आँगन में तुलसी के बिरवे के आगे दीपक जला दिया था। धुँधला धुँधला उजाला हो गया था।

गवाक्ष म पड़ी रावणा ने मन ही मन माँ तुलसी को नमस्कार किया। फिर उसे उदासी घेरने लगी। वह सोच रही थी कि कब वह इस बेमन की जिन्दगी को जीना बन्द करेगी। वह सिर्फ किसी की पत्नी बनना चाहती है पत्नी! और माटी सरदारसिंह उसे सदा आश्वासन देकर चले जाते हैं। वह घुटन नगी।

अँधेरा और गहरा हो गया था। गहरे अँधेरे को अपनी दृष्टि मे भर कर वह सोचने लगी—' नथिया ठीक कहती थी कि गरीब की औरत के सौ खसम होते हैं। मुझे ही देखो न, जात की दरोगन हूँ, कोई आगे पीछे नही है। किसी का सहारा आसरा नही। इसलिए दीवान जी अपनी जोरू समझते हैं जबकि मैं उनसे कतई प्यार नही करती। मेरा उनसे कोई लगाव नही। वे हृदयहीन पत्थर की भाँति हैं। अपने पद के मद मे चूर।

गवाक्ष मे प्रकाश की एक लकीर फैल गई थी। उसने घूमकर देखा, नथिया ने शयन कक्ष म भी दीपक जला दिया है। इस मिजिल तेल का दीया। दीये के प्रकाश से पलग के पायताने नगे दपण चमक उठे। झाड़ फानूसो मे लटकती झालरें जगमगा उठी।

वह थोड़ी देर के लिए बाहर बरामदे के सगमरमरी फर्श पर चहल कदमी करती रही फिर आकर पलग पर बैठ गयी। वयसन्धि की उम्र मे पार करते ही उसके अग प्रत्यग म यौवन-कुसुम गध बिखराते हुए खिले। तब उस पर दृष्टि पड़ी कूटनीतिज्ञ और दीवान सम्पतसिंह माहेश्वरी की। वे उसके रूप पर मोहित हो गए। उन्होने तुरन्त एक सिपाही भेज कर उसे अपनी हवेली की रगशाला म बुलाया। तब इस असहाय और सम्बल-हीन रावणा का सहारा थी—उसकी बुआ। लोभी बुआ। वह थोड़ी सी रावणा को सजा धजा कर दीवान जी की हवेली म ले गयी। रावणा का गोरा रग इतने गुलाबी घाघरे और ओढ़न म निखर उठा था। उसकी कजरारी बड़ी-बड़ी मीन सी आँखें मन को मोहित कर लेती थीं।

उसने जाकर दीवान जी को मुजरा किया। राम जाने क्यों।

जी हुक्के की नली को गुडगुडाते हुए बोले, 'दरोगिन ! हम तेरी बेटी भोत चोखी लगती है।'

अपने ओढने के पल्लू को दांतो के बीच दबाती हुई बुआ बोली, 'न—न—न— माइ-बाप यह मेरी बेटी नही, भतीजी है। बचपन से अनाथ है। मैंने ही इसे पाल पोस कर इत्ती बडी की है।"

अपने कठोर कालिमा लिए हुए होठो पर जीभ फिराते हुए दीवान जी बोले हाथ पाँव खूब निकाले हैं। क्या नाम है ?"

अन्नदाता ! मैं इसे रावणा ही कहती हूँ।' उसने अपनी थकी पलकों को झटका देकर मिमियाया और तनिक लम्बे स्वर में वह बोली, वैसे इसका नाम पूगलगढ की पद्मिनी रहना चाहिए। पूगल भी इतनी फूटरी नही होगा। सच कहूँ दीवान जी ! ऐसा रूप भोत कठि नाई से मिलता है।

हम यह पसन्द है। तुझे कोई एतराज तो नही है।'

जीभ निकाल कर तथा दोनो कान एक साथ पकड कर बोली, अन्नदाता ! भला ऐसा मैं कैसे कह सकती हूँ। आप इस धरती के धणी हैं। यहाँ की छोटी-बडी सभी चीजों पर आपका अधिकार है। आपकी चीज का धणियापा मैं कैसे कर सकती हूँ ?

रावणा यह सब सुन रही थी। शब्द शब्द को आत्मसात करने की चेष्टा कर रही थी। चेष्टा के साथ उनके मम को भी समझ रही थी। उसकी आत्मा ने जैसे सोच लिया था कि उसका एक वस्तु के रूप मे भोग किया जा रहा है।

उसे यह सब अच्छा नही लग रहा था। सरूपसिंह के रंग रूप और बातचीत के तरीको म प्रेम की गंध नहीं थी। सिर्फ वासना की मूम था।

बचपन से ही उसकी एक इच्छा थी कि वह एक अच्छे आदमी की दुल्हन बने। उसके अपने बच्चे हो। छोटा सा घर हो। उस घर

मे पति का रोष और जोश दोनों हो। बच्चा का रोना और मुस्कराना गूंजता हो। पर उसके भाग्य और बुआ की अभावों में ग्रस्त जिन्दगी ने साथ नहीं दिया। वह हाट की सी वस्तु बन गई।

फिर उसकी बुआ के भाग्य बदल गये।

सरूपसिंह जैसलमेर के महारावल मूलराज (द्वितीय) पर सम्पूर्ण रूप से हावी थे। समस्त शासन का एक भी पत्ता उनके संकेत के बिना नहीं हिलता था। गढ़ के एक एक कदम पर उनकी कूटनीति के जाल बिछे हुए थे और वे स्वतंत्र रूप से जो चाहते थे, वही करते थे।

उन्होंने तुरन्त रावणा के लिए यह पक्की हवेली दे दी। उसमें सुख और विलास के सारे प्रसाधन एकत्रित कर दिये। फिर एक दिन दीवान जी ने अचानक अपने आने की सूचना भिजवायी।

उस समय अपराह्न था।

सूर्य देवता पश्चिम के प्रांगण की ओर अग्रसर हो रहे थे। सूखे देश की सूखी तपती हवा भी शरीर में एक विचित्र कम्पन उठा रही थी।

बुआ प्रसन्नता में किलकती हुई आई। अपनी भतीजी रावणा की बलैया लेती हुई बोली, "तेरा दरिद्र दूर हुआ मेरी लाडेसर। देख, दीवानजी ने कितना अच्छा "वेष्ठा" भिजवाया है। अरी सुन, आज रात वे हमारे यहाँ पधारेंगे।" बुआ गंभीर हो गई। उसकी लालची नीली आँखें अपने औसतन आकार से बड़ी हो गई। उसने मुँह से अपना मुँह भिड़ाती हुई वह बोली, 'लाडी सा! जरा हुशियारी से बातचीत करना। दीवानजी प्रसन्न हो गए तो जन्म-जन्मान्तरों के कष्ट और दरिद्रता दूर हो जाएगी।"

रावणा इतने दिन से बुआ की क्रिया-विधि को देख रही थी। समझ रही थी कि बुआ ने नितान्त अभावग्रस्त जीवन जिया है। उसका पति स्वयं एक "गोला" था। जीवन भर रोटियों के बदले रावले में जी हुजूरी करता रहा। पीड़ा और दासता उसने अंतिम सांस तक सही। उसकी बुआ भी मारी-मारी सामन्तों, सरदारों, उमरावों और अधिकारियों की

हवेली म घूमती रही। अपने साधारण रूप से वह किसी को नहीं लुभा सकी। इसीलिए आज जब उसे थोडी सी सुख सुविधा मिली तो वह बावली हो गई।

रावणा ने सब कुछ जानत हुए भी पूछा, "दीवानजी क्या आयेंगे? उनका रात को यहाँ क्या काम है?

बुवा के होठो पर एक निलज्जता की हसी तर गयी। उसके गले म हाथ डालकर उसकी नाक की नथ को छूकर वह बोली वे तुम्हारी इस नथ को खोलेंगे। नही समझी। फिर समझ जाएगी। दीवान जी बडे हुशियार हैं।"

रावणा को रोमांच हो गया।

× × ×

रात धीरे धीरे ढल गई।

रावणा के पयन कक्ष म अब भी दीया जल रहा था। प्रात अप्रत्याशित एक और घटना घटित हो गई।

रावणा साँझ होने से पहले सोलह श्रृगार करके गवाक्ष म खडी थी। बनी ठनी ताम्बूल खा रही थी। इसी समय भाटी सामन्त 'सरदारसिंह घोड पर गवाक्ष नीचे से गुजरा।

रावणा अपने ध्यान म निमग्न थी। उसने बिना देखे ही पीक थूक दी। पान की फुहार की कुछ बूँदें भाटी सरदारसिंह की पोशाक पर पड गईं। सरदारसिंह एकदम क्रोध म भर उठा। उसने ऊपर की ओर देखा साथ हा उसने म्यान से तलवार खींचा।

कौन है बदतमीज?' उसने गरजकर पूछा।

फिर ऊपर की ओर देखा तो देखता ही रह गया। अनुपम सौन्दर्य मानो भाटी सामन्त के नेत्रो म समाविष्ट हो गया हो।

रावणा भी उस यौवन की दहलीज पर खडे आजानुबाहु वाले युवक

को देखती रह गई। मद्धम स्वर में बोली, "मुझे खम्मा करिए सरदार, मुझसे भूल हो गई।"

सरदारसिंह अपलक दृष्टि से रावणा को मर्माहत करके चला गया।

उसका अलौकिक यौवन रावणा के मदिर अलस नयन में समाया रहा।

चन्द्रज्योत्स्ना स्वर्णिम बालुका प्रदेश पर सोयी हुई थी। मधुर स्मृति में मगन रावणा 'डागल' (छत) पर आ गयी। देखती रही मौन नगर को।

तभी दीवानजी ने आकर उसके द्वार को खटखटाया। बुआ ने द्वार खोलकर कोर्निश की—'खम्मा अन्नदाता घणी कृपा की। पधारिए, पधारिए।

दीवानजी ने बुआ के समक्ष कुछ मोहरें फेंकी। बुआ इन मोहरों पर झपट पड़ी। उसकी आँखों में भूख थी, भयानक भूख!

दीवानजी ने पूछा "रावणा कहां है?"

"डागले पर।" फिर उसने पुकारा, "रावणा! दीवानजी आ गये हैं।" वह मोहरों को देखकर खुशी से पागल-सी हो गयी थी।

सरदारसिंह की स्मृति में विस्मृत रावणा चौंक पड़ी। नीचे आयी अनिच्छा से। आकर मुजरा किया।

दीवानजी गाव तकिये के सहारे बैठ गये। उनके समीप बैठ गयी रावणा। बीच में आ गयी बुआ। बोली 'किसी चीज की जरूरत हो तो इस दासी को पुकार लें।'

दीवानजी ने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। जब बुआ चली गयी तब दीवानजी ने कहा, 'रावणा! हमें जल नहीं पिलाओगी?"

रावणा ने जल का गिलास भर कर दीवानजी के हाथ में थमा दिया। दीवानजी ने गिलास के साथ उसका हाथ पकड़ लिया। रावणा को यह स्पर्श ऐसा लगा जैसे कोई सर्प दंश हो। वह तमक कर बोली, "यह क्या कर रहे हैं आप?"

दीवानजी ने गटागट पानी पिया। फिर उसे अपनी ओर खींचते हुए कहा—'तेरी बुआ से सौदा हो चुका है।"

एक अजीब सी बदबू आ रही थी दीवानजी के बदन से। घृणा की लहर रावणा के हृदय सागर में दौड़ गयी। बोली, "नहीं मुझे छोड़ दीजिए। " पर दीवानजी ने उसे नहीं छोड़ा। जब रावणा ने अधिक विरोध किया तब दीवानजी ने बुआ को बुलाकर कहा, 'मैं तुम दोनों को जिन्दा जलवा दूंगा। मुझसे धोखाधड़ी करती हो। रुपये लेकर अब नान्नू। मैं लात मारकर खाया पीया बाहर निकाल लेता हूँ। समझी।

और बुआ ने एकान्त में ले जाकर रावणा को समझाया "क्यूं अपना जीवन नरक बना रही हो। कल ही यह घर बार छिन जायेगा और दीवानजी हमें कैद में डाल देंगे।"

इस तरह कुंवारी धरा का आंचल कलंकित हो गया। अनिच्छा और समर्पण।

/ × ×

सरदारसिंह एक वीर योद्धा! उससे रावणा अपना हृदय लगा बैठी थी। पर दीवानजी की नग्नता और महारावल पर जिस तरह का आतंक था उसके कारण रावणा दोनों को एक साथ नहीं ठुकरा न देती थी। हर पल भयभीत व आशंकित रहती थी।

तिमिर गहरा हो गया था। तारे और तेज होकर चमकने लग थे। वह सोच रही थी "जीवन को इतनी मार्मिक पीड़ा लेकर नहीं जिया जा सकता। यह कूरा जीवन है। मैं दीवानजी से घृणा करती हूँ। उनके जिस्म से मुझे दुर्गन्ध आती है। फिर भी यह वर्तमान न्याय और सत्ता का स्वामी मुझे अपनी वासना से आहत करता है। भूखा कुत्ता कहीं का।

बुआ ने आकर कहा, "दीवानजी आये हैं। देखो, तुम्हारे लिये हीरे की अँगूठी लाये हैं।"

उसने कोई उत्साह नहीं दिखाया।

दीवानजी आकर बैठ गये। उन्हें थोड़ी ही देर हुई थी कि सरदारसिंह भी आ गया। आकर जोर जोर से कुंडी खटखटाने लगा।

दीवानजी खड़े हो गये। कड़ककर बोले, "कौन है ?

रावणा ने आकुल भरे स्वर में कहा "भाटी सामंत सरदारसिंह।'

'वे यहां क्यों आये हैं ?'

वे भी मेरे यहाँ आते हैं। मैं उन्हें प्यार करती हूँ।"

दीवानजी ने एक चाटा रावणा के कपोलों पर जमाते हुए कहा, "छिनाल कहीं की, खाती है मेरा और गाती है गीत भाटी जी का। मैं भाटी जी और तुझे दोनों को देख लूंगा। दीवान मेहता सरूपसिंह गावरी के गुस्से को अभी तक तुम दोनों ने नहीं देखा है। मेरे क्रोध से धरती काँप जाती है।"

दीवानजी धड़ धड़ करते हुए नीचे उतर गये।

दरवाजा खोला। सरदारसिंह ने आश्चर्य से पूछा, "आप दीवानजी!

दीवानजी ने दूसरी ओर मुंह घुमाकर घृणा से थूक दिया।

सरदारसिंह भी तेजी से ऊपर की ओर चढ़ा। उसने रावणा से पूछा, 'यहाँ दीवानजी क्या आते हैं ? तुम चुप क्या हो ? बोलती क्या नहीं ? रावणा ! मैं पागल हो जाऊंगा। मुझे बता दो यहाँ दीवानजी क्यों आये थे ?"

रावणा ने कोई उत्तर नहीं दिया। जब सरदारसिंह अधिक व्यग्र हो गये तब वह फफक फफक कर रो पड़ी।

जब हृदय का झंझा शान्त हो गया तब रावणा ने सारे व्यतीत को अनावृत करते हुए कहा, आप जिसे अर्चना का पात्र समझते हैं वह एक पातुर से अधिक नहीं है। कुंवर सा ! आप इस गंदगी को मत छूइए आप मुझे भूल जाइए।"

दीवानजी ने गटागट पानी पिया। फिर उसे अपनी ओर खींचते हुए कहा—"तेरी बुआ से सौदा हो चुका है।"

एक अजीब सी बदबू आ रही थी दीवानजी के बदन से। घृणा की लहर रावणा के हृदय सागर में दौड़ गयी। बोली, "नहीं मुझे छोड़ दीजिए। " पर दीवानजी ने उसे नहीं छोड़ा। जब रावणा ने अधिक विरोध किया तब दीवानजी ने बुआ को बुलाकर कहा, ' मैं तुम दोनों को जिन्दा जलवा दूंगा। मुझसे धोखाधड़ी करती हो। रुपये लेकर अब ना-नूं। मैं लात मारकर खाया पीया बाहर निकाल लेता हूँ। समझी।'

और बुआ ने एकान्त में ले जाकर रावणा को समझाया, 'क्यूं अपना जीवन नरक बना रही हो। कल ही यह घर बार छिन जायेगा और दीवानजी हमें कैद में डाल देंगे।'

इस तरह कुंवारी धरा का आंचल कलंकित हो गया। अनिच्छा और समर्पण।

× × ×

सरदारसिंह एक वीर योद्धा। उससे रावणा अपना हृदय लगा बैठी थी। पर दीवानजी की नामता और महारावल पर जिस तरह का आतंक था उसके कारण रावणा दोनों का एक साथ नहीं ठुकरा देती था। हर पल भयभीत व आतंकित रहती थी।

तिमिर गहरा हो गया था। तारे और तेज होकर चमकने लगे थे। वह सोच रही थी 'जीवन को इतनी मार्मिक पीड़ा लेकर नहीं जिया जा सकता। यह झूठा जीवन है। मैं दीवानजी से घृणा करती हूँ। उनके जिस्म से मुझे दुर्गन्ध आती है। फिर भी यह वर्तमान न्याय और सत्ता का स्वामी मुझे अपनी वासना से आहत करता है। भूखा कुत्ता कहीं का।

बुआ ने आकर कहा, "दीवानजी आये हैं। देखो तुम्हारे लिये हीरे की अगूठी लाये हैं।"

उसने कोई उत्साह नही दिखाया।

दीवानजी आकर बैठ गये। उन्हे थोडी ही देर हुई थी कि सरदारसिंह भी आ गया। आकर जोर-जोर से कुंडी खटखटाने लगा।

दीवानजी खडे हो गये। कडककर बोले, 'कौन है ?"

रावणा ने व्याकुल भरे स्वर म कहा, "भाटी सामन्त सरदारसिंह।'

"वे यहाँ क्यों आये हैं ?'

'वे भी मेरे यहाँ आते हैं। मैं उन्हे प्यार करती हूँ।"

दीवानजी ने एक चांटा रावणा के कपोलो पर जमाते हुए कहा, "छिनाल कही की खाती है मेरा और गाती है गीत भाटी जी का। मैं भाटी जी और तुझे दोनों को देख लूंगा। दीवान मेहता सरूपसिंह टावरी के गुस्से को अभी तक तुम दोनो ने नहीं देखा है। मेरे क्रोध से धरती कांप जाती है।"

दीवानजी धड धड करते हुए नीचे उतर गये।

दरवाजा खोला। सरदारसिंह ने आश्चर्य से पूछा, "आप दीवानजी!"

दीवानजी ने दूसरी ओर मुह घुमाकर घृणा से थूक दिया।

सरदारसिंह भी तेजी से ऊपर की ओर चढा। उसने रावणा से पूछा, 'यहाँ दीवानजी क्या आते हैं ? तुम चुप क्या हो ? बोलती क्या नही ? रावणा ! मैं पागल हो जाऊगा। मुझे बता दो यहाँ दीवानजी क्यो आये थे ?'

रावणा ने कोई उत्तर नहीं दिया। जब सरदारसिंह अधिक व्यग्र हो गये तब वह फफक फफक कर रो पडी।

जब हृदय का झझा शान्त हो गया तब रावणा ने सारे व्यतीत को प्रमाणित करते हुए कहा, "आप जिसे अर्चना का पात्र समझते हैं, वह एक पातुर से अधिक नहीं है। कुंवर सा ! आप इस गदगी को मत छुइए। आप मुझे भूल जाइए।"

सरदारसिंह पीड़ा से कराह उठा, "मैं ऐसा स्वप्न में भी नहीं सोच सकता। रावणा! मैं तुम्हें अपने हृदय की रानी बनाना चाहता था। तुम्हें मंदिर की मूर्ति बनाना चाहता था पर तुम चौराहे की धूल हो गयी।'

रावणा ने व्यथित विगलित स्वर में कहा, ' रावणा क्षमा नहीं मांगती, वह आपसे सजा चाहती है। मैं पापिन हूँ, पर प्यार मैंने आपको ही किया है। आप मेरी विवशता नहीं जानते। दीवानजी बड़े निर्दयी हैं। वे आपको जिन्दा नहीं छोड़ेंगे। मैं सौगन्ध खाती हूँ कुंवर सा। तन जरूर अपावन है पर मन, मन पावन है। मैं मन से सदा आपकी जय करती हूँ। इतना सोचिए हम कितने लाचार हैं। आप होशियार रहियेगा। दीवानजी अवश्य कोई न कोई चोट करेंगे।

सरदारसिंह रावणा के अश्रु भरे मुख को देखता रहा। फिर उसे अपने आलिंगन में आबद्ध करता हुआ बोला सचमुच तुम पावन हो। रावणा मैं इस दीवान के बच्चे को ।'

'हाँ कुंवर सा। मुझे इस विलासिता और सम्पन्नता से दूर ले चलिए। मैं किसी की बहू बनना चाहती हूँ। किसी के बच्चे की माँ। पर यह जीवन और उसके हाकिम आदमी को क्या से क्या बना देते हैं। कोई नहीं जानता। मुझे आप चाहिए सिर्फ आप।"

'ऐसा ही होगा।'

रात सिसकियों में डूबती हुई सो गयी।

× × ×

कुछ दिन बाद—

मकरसंक्रान्ति का त्योहार था।

सरदारसिंह सुबह-सुबह ही महारावल युवराज के बड़े पुत्र रायसिंह

के पास गया। रायसिंह के जेवखच म दीवानजी ने बड़ी कटौती कर दी थी। वह प्रतिशोध की आग में जल रहा था। वह किसी भी क्षण दीवानजी को पराजित करना चाहता था। जब सरदारसिंह ने उसको भड़काया तब वह उ मादित स्वर मे बोला, 'मैं क्या करूँ ? मैं उसको मौत के घाट उतारना चाहता हूँ।'

"आप उन्हें आज भरे दरबार म मत्यु दीजिए। सारे सामन्त-सरदार इस दुष्ट के कुचक्रो से तंग हैं। यह उनकी मान मर्यादा को धूल म मिलाने के लिए प्रयत्नशील है। आप भरे दरबार म दीवानजी को कत्ल कर डालिए। मैंने प्रमुख सामन्तो से बातचीत कर ली है।"

"सच।"

'मैं कुलदेवी की सौगन्ध खाकर कहता हूँ।"

युवराज जरा विचार मे पड गये।

सरदारसिंह ने पुन कहा, 'आपके हाथ म यदि यह अवसर निकल गया तो सारी उम्र हाथ मलते ही रह जायेंगे। इस समय आप असन्तुष्ट सामन्तो की मनस्थिति का लाभ उठाकर महारावल भी बन सकते हैं।'

प्रतिहिंसा की आग म दग्ध और महारावल बनने के प्रलोभन ने रायसिंह को विचलित कर दिया। वह भौंह टेढी करके बोला, "फिर आज गढ के अमरविलास कक्ष म आप सावधान रहियेगा।'

सरदारसिंह वहाँ से सीधा रावणा के पास आया।

"आप आ गए कुँवर सा।'

'हाँ रावणा आज मैं तुझे अपने गाँव ले जाऊँगा। तेरे पावन मन के वृन्दावन म प्रेम का नया दीया जलाऊँगा।"

कुँवर सा! मुझे अपने चरणों की दासी ही बना लीजिए। पर यहाँ से ले चलिए ।"

'क्षत्री के वचन हैं।" फिर उसने सारी स्थिति समझायी। रावणा गदगद होकर बोली "कुँवर सा! मैं गन्न किसी एक की बहू बन कर रहना चाहती थी। मेरी नारी ममता के लिए तरस रही है। पर यह

बुआ यह कुटनी है। इसे धन चाहिए, केवल धन।'

सरदारसिंह वहाँ से लौट आये।

× × ×

अमर विलास में दरबार लगा था। महारावल सिंहासन पर बैठे थे तभी दीवान जी अपनी मूँछों पर ताव देते हुए आए और बोले, 'यह पवित्र त्यौहार ऋतु-परिवर्तन का प्रतीक है। युवराज को इस अवसर पर हम कोई विशेष अधिकार नहीं दे पायेंगे, लेकिन उनके व्यय में थोड़ी और कटौती करेंगे, क्योंकि खजाने में रुपया की कमी है और युवराज बहुत ही व्यय खर्च करते हैं।' बात समाप्त करते हुए उन्होंने मूँछों पर ताव दिया।

युवराज ने चीख कर कहा "दीवान जी!"

दीवान जी के होठों पर कुटिल हंसी थी।

फिर युवराज झपट पड़े उस पर। देखते देखते उनकी तलवार ने दीवान जी को मौत के घाट उतार दिया।

महारावल चीखे पर उन्हें भी सामन्तों ने नजरबन्द कर लिया। सरदारसिंह इस षड्यन्त्र का प्रमुख व्यक्ति था। वह वहाँ से सीधा रावणा के पास आया।

वह साडणी अपने साथ लाया था।

रावणा तैयार खड़ी थी। बुआ बड़ी गयी हुई थी। सरदार ने उसे साडणी पर बिठाया और कहा आज से तुम मेरी सर्वस्व हो। जल्दी ही यहाँ से दूर भाग चलें हम लोगों ने दीवान जी का काम तमाम कर दिया है।

रावणा प्रसन्नता से उछल पड़ी। फिर नितान्त उदास हो गयी।

उसे बहुगी दीवान के साथ व्यतीत किए वे पीडित क्षण याद आ गये। वह सिसक पडी।

सरदारसिंह ने पूछा "अरे, तुम रोती क्यों हो?"

'मुझे अभी भी भय लग रहा है कुवर सा, कि इस भाग्यहीना की यात्रा बिना विघ्न पूरी हो जायेगी कि नहीं?"

'अब कोई बाधा नहीं है रावणा! यह नयी यात्रा निष्कटक रहेगी।'

और साडणी चल पडी, रेतीली पगडडी पर धीरे धीरे, बहुत धीरे। और रावणा, कल्पना लोक म एक नयी रावणा जन्म ले रही थी। नववधू-सी, बच्चो की माँ! एक नयी रावणा, एक नयी औरत!

और साडणी धूल के धोरो म खो गयी।





शाहजहाँ का सन्देह

आज भी इस किले की दीवार नीरवता के आँसू बहाया करती हैं। आगरे का यह किला जिसमें किसी समय भारत के एक कला प्रिय शहंशाह के अन्तिम दुर्दिन बीते थे। वह शहंशाह जिसकी कला और प्रेम प्रियता का प्रतिरूप है यह ताजमहल, तब ताज की कठोर पत्थर की छाती में छिपी मुमताज बेगम की प्यार भरी आत्मा अपने पागल पति की ऐसी दुर्दशा देखकर फट पड़ी थी और उसे ऐसा अनुभव होने लगा था जैसे उसका पति नितान्त विरल और हतबुद्धि सा होकर कह रहा है—हे मेरी मन की लालसा और प्रेम के इस पवित्र अचल पर मेरे ये आँसू धन्य बनकर सदा यह कथा कहते रहेंगे। एक समय ऐसा आया जब प्रेम की पवित्र आत्माओं ने एक पिशाच को पैदा किया जिसने हमें कैद में डाल कर तड़पा तड़पा कर मारा।

इन्ही पत्थर की निष्प्राण दीवारो मे दिल्ली का सम्राट शाहजहा अपने अन्तिम दिन बिता रहा था।

दोपहर का समय था। चिलचिलाती धूप से समस्त आगरा आकुल था और आकुल थी यमुना की शांत लहर जो ताजमहल के प्रतिबिम्ब को अपने अक मे समेटे कूलो से टकराती हुई धीरे धीरे बह रही थी। सम्राट ने निरीह मानव की तरह उन लहरो का ओर देखा और फिर रो पड़ा। आखो के आँसू झुर्रियो युक्त गालो से होते हुए दाढी म उलझ गए। आँसुओं के तूफान ने आँखो की ज्योति मे धुन्ध पैदा कर दी और जब धुध दूर हुई तो उन्ह अपना ताज याद आया और ताज के साथ मुमताज और मुमताज के साथ उसके अन्तिम क्षण। जब मुमताज की आखें कह रही थी 'अपने प्रेम की याद का एक आलीशान स्मारक हो जो हम दोनो को अमर बना दे। और इसी अमर स्मारक के लिए शाहजहाँ ने अपने मन की शांति तक को भी बेच दिया था, अमीरो गरीबो और मजदूरो को ताज की मीनारो के निर्माण म बलि चढा दिया था। सम्राट की अशान्ति बढ गई। उनके दिल म ऐसा अनुभव हो रहा था, मानो, उन सब बलि दिए गए मजदूरो की दीन स्त्रियाँ अनाथ बच्चे और माता पिता सब क सब उसे अभिशाप दे रहे हैं और य अभिशाप आज फलीभूत होकर उसे अशान्त कर रहे हैं।

तभी गम लू का तज झोका आया। बादशाह का ध्यान अपने गले की ओर गया जो सूख रहा था। उन्होने रक्षक को पुकारा और एक सम्राट की तरह आदेश दिया—"हम ठडा पानी दिया जाय क्योकि सुराही का पानी गम हो चुका है।'

रक्षक न तुरत अस्वीकार करते हुए कहा—"गुस्ताखी के लिए माफी, यदि आप हिन्दुस्तां के शहशाह का हुक्म मँगवा देत हैं तो हम आपको और पानी ला सकते हैं वरना हम मजबूर हैं।'

सम्राट की आत्मा आहत-सी हो गई। आंखो म आँसू बूदो की भाँति बरस पड़े। उन्हे स्मरण आया—जिस तरह मरुथ म बच्चे जु

दने वाली माता को भी खा जाते हैं उसी तरह यह काला साँप मुझको खा जायगा खा जायगा, अपने अब्बा के बनाये इस हुकूमत को खा जायगा, भाइयो को खा जायगा। क्रोध मे उनका चेहरा तमतमा आया मुट्ठियाँ बँध गई और रोत रोते लिखने बैठ—

शहन्शाह हिन्दोस्ताँ !

आपकी कैद के बन्दी को सुराही का पानी खत्म हो चुका है इसलिए हमने ठण्डा पानी तुम्हारे नौकरों से माँगा पर नौकरों ने आपका हुक्म चाहा। आशा करता हू कि पानी से भी गये-गुजरे अपने अब्बा को हुक्म मिल जायगा।

बदनसीब—
शाहजहाँ

मुगलिया साम्राज्य का अन्तिम सम्राट औरंगजेब अपने पिता द्वारा ऐसा विवशता भरा पत्र लिखा हुआ देखकर एक क्रूर अट्टहास कर उठा। उसकी आँखें दम्भ से और भयानक हो गईं। पत्र को बार-बार पढ़कर वह अपनी महानता का मूल्यांकन कर रहा था। सोच रहा था—शाहजहाँ ने खुद इस बात को लिखकर मंजूर किया कि इस हुकूमत का असली हकदार मैं हूँ मैं हूँ। अहम की पराकाष्ठा ने उसे पागल कर दिया। अनमने ही लेखनी चला दी। उत्तर म कुछ विशेष नहीं था। केवल दो शब्द थे—

'जिस स्याही से आपने मुझे खत लिखा है उसी स्याही को पीकर अपनी प्यास बुझा लीजिए।'

उत्तर मिला पर उसमें हस्ताक्षर नहीं थे। अपना यह उपहास देखकर सम्राट रो उठा। उसी क्षण उन्होंने औरंगजेब से मिलने की उत्कंठा प्रकट की। उस प्रार्थना को स्वीकार कर लिया गया।

यमुना के सौम्य कूल पर औरंगजेब का निवास स्थान था। अतः शाहजहाँ को जन मार्ग से वहाँ तक ले जाने का प्रबन्ध किया गया। मार्ग

म नाविका न थोडा आहार किया । आलू भुजियो की नमकीन गुग ध ने शाहजहां को अपनी ओर आकर्षित कर लिया । उ ह बीती बातें स्मरण हो आई कि एक दिन उन्होंने युवावस्था मे इसी प्रकार अपने साथियो के साथ शिकार से लौटते समय आलू भुजिए खाये थे । स्मृति ने हृदय को कमजोर कर दिया । लाख चाहने पर भी व अपने मन को न मना सके और अ त म कह ही उठे—"यदि कोई एतराज न हो तो थोडे से भुजिये हम भी द दो ।

बादशाह की इस निरीहता पर एक मल्लाह रो उठा । शाहजहां की आंखो मे उभरी करुणा को पहचान कर वह अनायास कह उठा—"कुदरत के खेल निराले है । यह वह हाथ है जिसके सामने सारे मुल्क का हाथ फैला रहता था आज एक नाचीज मल्लाह क सामने फसा है ।" उसने तुरन्त थोडे भुजिय ही नही सब के सब शाहजहां की ओर बढाए कि किसी ने रोका—'महमद ! सम्राट औरगजेब ब दी पर किए गए ऐसे रहम की सख्त सजा देते है ।"

"पर ये भी तो हमारे मालिक है ?

"हैं नही, थे । आज ये हमारे बदी है और बदी की किसी तरह मदद करना हकूमत का गुनाह समझा जायगा ।

"तो ?"

तुम अपने सारे आलू भुजिए खा लो इ ह अपने हाल पर छोड दो । सेनापति पुन अपने काय म व्यस्त हो गया ।

सम्राट ने अपना फैला हाथ मल्लाह के सामने से हटाकर आकाश के समक्ष फला दिया । दो घडी मौन रहने के पश्चात् वे स्वगत बोल पडे—"मेरा स देह झूठा है मेरा दाव झूठा है । गुरु वाणी म जो लिखा था वह ठीक था, एकदम सच, सोलह आने सच ।

और, एकाएक अतीत की एक घटना उनकी आंखो के समक्ष चित्र की भांति घूम गई ।

एक बार वे अपने कुछ साथियो क साथ पजाब क एक गुरुद्वार

ओर जा रहे थे।

गुरुद्वार मे अचना और वन्दना का अत्यन्त सुहावना और मनमुग्ध कारी समा बँधा हुआ था। वाणी के पाठ की ध्वनि से सकल वातावरण गु जित था। प्राचीरो म लगी प्रकाशमान उल्काओ के प्रकाश पु ज से समस्त गुरुद्वारा उदभासित था।

नन नन देवभक्तो और पुजारियो म निस्तब्धता छा गई। साथ ही सबकी दृष्टि मुख्य द्वार पर जा लगी। मुख्य-द्वार से एक अलौकिक प्रतिभा प्रवेश कर रही थी। य थे महान त्यागी और शूरवीर नरश्रेष्ठ गुरु गोविन्दसिंह।

गुरु गोविन्दसिंह अपने पूव निश्चित आसन पर आसीन हुए। उनके बठने क साथ-साथ समस्त जन-समूह बैठ गया। पाठी न गुरु वाणी के वचनो का पाठ आरम्भ किया। श्रोतागण तन्मय होकर सुन रहे थे। पाठी ने कुछ उच्च स्वर से एक वचन पढा—

नजर अपुठी जे करे सुलताना घा करवाइदा।

भिख मगे दर न पाइ दा।

अर्थात, जब भगवान की दृष्टि विपरीत हो जाए तो सुलतानो को घसियारा बनाकर वह उनस घास खुदवाता है और भीख मांगने पर भी उन्हे भीख नहीं मिलती।

तभी द्वार पर एक अपरिचित किन्तु प्रतिभा सम्पन्न आकृति प्रवेश करना-करते उल्टे पाव लौट पड़ी। वचन का श्रवण उसने भली भांति कर लिया था। बाहर आकर वह अपन एक साथी से गम्भीर स्वर म बोला— हमने आज गुरु वाणी का एक वचन सुना, जिसम हमें हकीकत की जगह झूठ मालूम हुआ इसलिए हम उल्टे पांव लौट आए।'

यह सुनकर मुझ्छा हो लिया परवर दिगार। एक चापलूस ने सलाम करके कहा।

उमर मनराज की सचाइ पर हम नाज है। भला कौन ऐसा मनुष्य होगा जो एक बादशाह क भिखारी बन जाने पर भीख नहीं डालेगा।'

'सब डालेंगे गरीब परवर।'

"तभी तो यह शक-यकीन के साथ दिन म घर किए बठा है।"
शाहजहा ने दम्भ भरी दृष्टि से अपने प्रत्यक सिपाही को देखा। सिपाही सम्राट की चाह को भाँप गए। अपने प्रभु का प्रम न करने के लिए सबने एक स्वर म कहा—"आप ठीक कहत है जहाँपनाह ! क्योंकि आपका ओहदा भी खुदा से कम नहीं है। गुरु वाणी हिन्दू जाति की एक धार्मिक पुस्तक है। उसके लिखने वाले साधारण आदमी होंगे और आप खुदा के पैगम्बर हैं इसलिए आपकी राय ज्यादा वजनदार है।

इस प्रकार की प्रशंसा सुनकर शाहजहा की आँखें गव से चमक उठी। होठो पर एक मिथ्या विजय का उल्लास मुस्कान बनकर छा गया। मानो उनकी आखें कह रही हैं—'मर शब्द ईश्वर के शब्दो से कम नही। प्रत्यक बात लिखने से पहले एक साहित्यिक और पथप्रदशक नेता को जीवन के अनुभवा को अच्छी तरह देख लेना चाहिए, नही तो बात भटक जाती है। सब के सब अदबो पर बठे चल जा रह थ। सबने हाँ म हाँ मिलायी थी।

अतीत का चलचित्र समाप्त हो गया। नाव म वे बहोश हो गए थ अपने ही दद म। इसलिए उन्ह वापस आगरा लाया गया। हकीम उपचार कर रहा था। सम्राट को चेतना मे आत देखकर वह प्रसन्नता से खिल उठा। पर सम्राट ने चारा ओर देखकर धीरे मे कहा—

नजर अपठठी जे करे सुलताना घा खपाउ दा
भिजै मगै मर न पाउ दा।

इस बार उनके स्वर म गुरु वाणी के इस वचन के प्रति गहरी आस्था, विश्वास और श्रद्धा थी। सचाई उन्ह एक एक शब्द म मालूम पड रही थी।

सारे व्यक्ति इस वचन के रहस्य से अनभिज्ञ विस्मत मे खड़े-खड़े सम्राट के चेहरे के उतार चढ़ाव को देख रहे थे।

[लोककथा पर आधारित]



क्षण भर की दुल्हन

बांदी प्रसन्नता के आवेग में भागी भागी आयी। उसकी साँस फूल रही थी। केसरिया रंग की चूनडी पीछे सरक गई थी। महावर रचे पाँवों में पायल छनक छनक करती एक लय में बज रही थी।

राजकुमारी मोडमते अपने निजी कक्ष के गवाक्ष से पावस ऋतु के धुले रजत ज्योत्स्नामय आकाश को देख रही थी। उसकी गंभीर दृष्टि में उदास परछाइयाँ तैर रही थीं। दूर-दूर तक मौन सोया हुआ था।

अपनी खास बांदी भारली को भागते हुए आते देखकर उसकी एकाग्रता भंग हुई। पलकों पर जो व्यथा पराग एकत्रित हो गया था उसे उसने अपनी मृदुल हथेलियों से दीर्घ निःश्वास के साथ पोंछा। फिर भारली की ओर उन्मुख हुई और रुष्ट स्वर में बोली, 'क्या है?'

"बाई सा, अभी कुंवर वजेन्द्र जी कह रहे थे कि पूगल के भाटी राजकुमार सादुल ने एक साथ दो शेरों को मार डाला। सचमुच ऐसा योद्धा इस समय भूमि पर नहीं है।"

और यह प्रशस्ति उसके आत्म लाव में कई दिनों से अंकुरित प्रणय बीज पर जल सिंचन कर गई।

वह पीतल की मयूरी दीवट पर रखे दीपक के सन्निकट आयी और उसकी बाती को ठीक करते हुए बोली 'सादुल जी नर नाहर हैं। पर मेरे भाग्य में ऐसे शूरवीर पति कहाँ? राव सा ने मेरे भाग्य को बचपन में ही मारवाड़ के चूंडोजी राठौड़ के पुत्र अरड़कमल के संग बाँध दिया है।" कोडमदे इतना कहकर मखमली शय्या पर आकर अर्ध शायित हो गयी। उसका मन अपने अन्तर की दुर्निवार पीड़ा से दहक सा उठा जैसे उसे अरड़कमल के साथ निश्चित किया हुआ विवाह सम्बन्ध कतई पसन्द नहीं है। उसने अपने नयन क्षण भर को बन्द किये और फिर वह उठकर समीप रखे एक लकड़ी के अत्यन्त आकर्षक सन्दूक के पास आई। उसे खोला और उसमें से एक चित्र निकाला। चित्र नितान्त तरुण का था। विशाल नेत्र और आजानु बाहें। वक्ष पर लटकते तीन विभिन्न मोतियों के हार। वह उस चित्र को अपलक और अपनत्व से देखती रही। यह चित्र सादुल का था।

कोडमदे ने हीरक कर्णफूल पहन रखे थे। उसकी छाया चित्र के चेहरे पर पड़ रही थी। उस हिलाकर वह भारली से बोली 'तुम मेरी बाँदी ही नहीं छोटी बहिन भी हो। क्या कोई ऐसा उपाय नहीं हो सकता जिससे मेरा विवाह सादुल जी जैसे नरसिंह से हो जाय?"

"क्या उपाय हो सकता है?' निरुपाय होकर भारली बोली।

'कुछ भी करो।

"मैं प्रयास करूंगी। भारली ने कोडमदे का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "सच बाई सा, एक बार भी वह नर-केसरी आपके हाथ की कलाई भी देख ले तो आपके परिणय के लिए व्यग्र हो उठे। क्या रूप



क्षण भर को दुल्हन

बांदी प्रसन्नता के आवेग में भागी भागी आयी। उसकी साँस फूल रही थी। केसरिया रंग की चूनड़ी पीछे सरक गई थी। मेहँदी रचे पावों में पायल छनक छनक करती एक लय में बज रही थी।

राजकुमारी कोडमदे अपने निजी कक्ष के गवाक्ष से पावस ऋतु के धुले स्वच्छ ज्योत्स्नामय आकाश को देख रही थी। उसकी गंभीर दृष्टि में उदास परछाइयाँ तैर रही थीं। दूर दूर तक मौन सोया हुआ था।

अपनी खास बांदी मालती को भागते हुए आते देखकर उसकी एकाग्रता भंग हुई। पलकों पर जो व्यथा पराग एकत्रित हो गया था उसे उसने अपनी मृदुल हथेलियों से दीर्घ निःश्वास के साथ पोंछा। फिर मालती की ओर उन्मुख हुई और टूटते स्वर में बोली, "क्या है?"

"बाईसा, अभी कुंवर बजेन्द्र जी कह रहे थे कि पूगल के भाटी राजकुमार सादुल ने एक साथ दो शेरों को मार डाला। सचमुच ऐसा योद्धा इस समय भूमि पर नहीं है।"

और यह प्रशस्ति उसके आत्म [illegible] में कई दिनों से अंकुरित अनुराग बीज पर जल सिंचन कर गई।

वह पीतल के मयूरी दीवट पर रखे दीपक के निकट आयी और उसकी बाती को ठीक करते हुए बोली "सादुल जी नर-नाहर हैं। पर मेरे भाग्य में ऐसे शूरवीर पति कहाँ? [illegible] मेरे भाग्य को बचपन में ही मारवाड़ के चूंडोजी राठौड़ के पुत्र 'अरड़कमल' के संग बाँध दिया है।" कामदे इतना कहकर मखमली शय्या पर आकर [illegible] हो गयी। उसका मन अपने [illegible] की [illegible] पींगों में [illegible] उस अरड़कमल के साथ निश्चित किया हुआ विवाह-सम्बन्ध कुछ पसन्द नहीं है। उसने अपने नयन [illegible] फिर उठकर समीप रखे एक नक्काशी के [illegible]। उसे खोला और उसमें से एक चित्र निकाला। चित्र किसी [illegible] था। विशाल नेत्र और आजानु बाहें। [illegible] मोतियों के हार। वह उस चित्र को [illegible]। यह चित्र सादुल का था।

चाहिए। आपकी यह बेटी एक भयंकर भूल कर बैठी है। वह महीनों से भाटी सरदार सादुल को अपने मन मंदिर का देवता मान रही है। मैं चाहती हूँ कि मेरा हाथ आप उन्हीं के हाथ में दे दें। यह मेरी हार्दिक इच्छा है।

माणकराव पर वज्र टूट गया। हुक्के की नली हाथ की हाथ में रह गई। कुछ क्षण उनसे बोला नहीं गया। प्रश्नवाचक दृष्टि से वे कोडमदे को देखते रहे।

आप मेरे जन्मदाता और भाग्य विधाता हैं। आप यदि मेरी इच्छा के विरुद्ध भी अरडकमल को सौंपेंगे तो भी मुझे जाना ही पड़ेगा, लेकिन मैं उस तन स्पर्श नहीं करने दूंगी। वे मेरे शव को ही स्पर्श कर पायेंगे। कोडमदे के नयन अश्रुपूरित हो गये। राव को कुछ नहीं सूझ रहा था। केवल स्तब्ध से बैठे थे।

कोडमदे उठकर जाने लगी तो उन्होंने भारी स्वर में कहा, "ठहरो! यह अनहोना विचार तुम्हारे मन में कैसे आया? चौहाण वंश के राव इस तरह अपनी बहू बेटिया का सम्बन्ध तोड़ेंगे तो संसार उनकी आन-बान पर थूकेगा नहीं? वचनों के पालन के लिए जिन चौहाणों ने अपना सर्वनाश कर लिया क्या वे चौहाण राठौरों के समक्ष कन्या-दान की बात के लिए अपना सिर झुकायेंगे? कोडमदे! यह वचन भंग इस धरा को रक्त रंजित कर देगा। रणदेवी का खप्पर नर मुण्डों से भर जायगा। सोच लो।"

"मैं इन परिणामों से नहीं डरती। जिस दिन राजपूतानियाँ इतनी दूरदर्शी बन गयीं उस दिन राव सा, उनके पति निर्भय होकर युद्धभूमि में नहीं लड़ेंगे। वे प्रचंड मार्तण्ड की तरह तेजस्वी होकर शत्रुओं को भस्मीभूत नहीं करेंगे क्योंकि तब वे पति की मृत्यु के पश्चात आने वाले उन कष्टों के बारे में सोच लेंगे जो उन्हें निर्बल बना देंगे। कोडमदे का स्वर जोश में भरा था।

"किन्तु बेटी!

मैंने अपने हृदय की बात आपके समक्ष रख दी। अब आप स्वय अपना निर्णय ल। मैं इतना जानती हूँ कि महाबली सादुल के जीते जी चौहाणा का कोई भी बाल बाका नही कर सकता।'

माणकराव ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे सुन से बैठ रहे। कोडमदे वहा से उठकर अपने कक्ष मे आ गयी। भारली ने व्यग्रता से पूछा, "क्या कहा रावजी न।'

'उन्होंने अभी कोई उत्तर नही दिया। मुझे विश्वास है कि शीघ्र ही इस पर कोई नया निर्णय ले लिया जायगा।'

उसके चौथे दिन की बात है।

कोडमदे अभी भी अलस निद्रा म निमग्न थी। प्रभात के देवता सूय की रश्मियाँ ससति को आलोकित करने लगी। शीतल समीर क स्पश से कोडमदे की मुख श्री पर एक अलक उड कर इस तरह बिखर गयी थी मानो श्वेत सगमरमर पर काली रेख खींच दी हो।

भारली ने कोडमदे को जगाया। कोडमदे कदाचित मधुर स्वप्न देख रही थी इसलिए आँखें खोलत हुए वह तनिक रोष से बोली, "निगोडी, जब जगाती है तब मुझे स्वग के सुख से जगाती है।"

'लेकिन बाई सा मैं आपको सपने का स्वग नही सत्य का स्वग देने आयी हूँ। इस पथ्वी का जीता-जागता स्वग।'

त्वरा से वह तन्वी यौवना बैठ गयी। व्यग्रता से पूछने लगी 'कौन सा स्वग ? जल्दी से बता।'

'पहले मुह मीठा कराइए।"

तू मेरे मन की बात पूरा कर दे तो मैं तेरा मुँह ही मीठा नही, तेरी झोली मोतियो से भर दूगी।'

'फिर सुनिए। छाती पर हाथ रखकर सुनिए, आज आपके विवाह का नारियल पूगल के राजकुमार सादुलजी को जा रहा है। हालाँकि सारे चौहाण इसके कुपरिणाम स परिचित हो गए है ' ——— ——
कीयता से बोली।

"जो व्यक्ति अन्त के बारे में सोचता है, वह कभी आरम्भ ही नहीं करता।" कोडमदे ने सहज स्वर में कहा "पहले तेरी झोली मोतियों से भर दूं।" कोडमदे ने सचमुच अपने गले के मोतियों के हार को भारली के लाख मना करने के बावजूद भी उसको दे दिया और शीघ्रता से कपड़े बदल कर वह रावजी के पास गयी। उनके चरण स्पर्श करके बोली, 'ऐसा बाप किसी बेटी को नहीं मिलने का। भगवान से प्रार्थना है कि मेरी आयु भी आपको लग जाय। आपके शौर्य का डंका सर्वत्र बजे।' और खुशी के मारे कोडमदे की आँखों में अश्रु छलछला आए।

कोडमदे को अपने सीने से लगाकर माणकराव बोले, मेरा तुम्हें आशीर्वाद है कि तुम्हारा विवाह बिना विघ्न बाधा के हो जाय।

× × ×

शहनाई का मधुर-गीत भरा स्वर गूँज पड़ा।

पूगल का राजकुमार सादुल, जो अनंग सा रूपवान था और अर्जुन सा महाबली, दूल्हा बनकर आ गया। बड़े धूमधाम से विवाह हुआ। विवाह में कोई विघ्न नहीं पड़ी। लेकिन हर क्षण माणकराव को आशंका बना रहा कि किसी भी समय अनिष्ट हो सकता है। किसी समय राठौड़ वंश का अरड़कमल अपमान की आग में जलकर विध्वंस कर सकता है। इसलिए विदा के समय उसने सादुल को एकांत में ले जाकर कहा 'कुंवर सा! आपके साथ चुने हुए सैनिक हो हैं। आप मेरी सेना ले जाइये। मुझे विश्वस्त सूत्र से पता चला है कि अरड़कमल को इस विवाह के समाचार मिल चुके हैं। वह अपना मगनर का इस सहजता से नहीं ले जाने देगा। वह अवश्य ही आप पर आक्रमण करेगा।

राव की इस बात से सादुल का ओजस्वी मुख रक्तिम हो उठा। वह दृढ़ता से बोला शौर्य की परीक्षा इस तरह की लड़ाई में ही होती

है। मुझे अपनी कुलदेवी का विश्वास है और भरोसा है इन भुजाओं का। आप आकुल-व्याकुल मत होइये। यदि अरड़कमल रणभूमि में उतर आया तो उसे दिन के तारे दिखा दूंगा।"

"लेकिन कुंवर सा! दो मिट्टी के ही बुरे होते हैं। राजनीति और युद्ध केवल बल से ही नहीं, कौशल से भी लड़ा जाता है। वह कौशल अभी यही कहता है कि आप अपने साथ सेना लेकर जायें।"

"मुझे आपका यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं है। मेरी माँ सा ने जब पहली बार मेरे हाथ में तलवार दी थी तब कहा था कि मुझे तुम्हें जन्म देकर कोई प्रसन्नता नहीं हुई है, मुझे सच्ची प्रसन्नता उस दिन होगी जब तू विजयी होकर आयेगा।"

माणकराव ने किंचित हिचकते हुए शंका प्रकट की, "वही अरड़कमल अपनी विशाल वाहिनी के संग आक्रमण करके कोडमदे को ...।"

सादुल के नेत्रों से अंगारे बरसने लगे। वह कड़क कर बोला, "जब आकाश फटने लगेगा, जब इस धरा पर धर्म नहीं रहेगा, जब रणांगण नर मुण्डों से भर जाएगा और जब सूरज अपना तेज छोड़ देगा तब सादुल की पत्नी को कोई उससे छीन सकता है। आप निश्चिन्त होकर हमें विदा कीजिए। आशंकाओं व दुराशाओं से भयभीत मत होइये।"

अन्त में माणकराव ने अपनी कन्या कोडमदे को सादुल के साथ विदा कर दिया। भारली उसके साथ थी।

बारात बीकानेर से लगभग १६ मील के पास थी। उसी समय अरड़कमल ने अपनी विशाल राठौड़ी सेना के साथ सादुल पर आक्रमण कर दिया।

सादुल ने उस आक्रमण का सामना किया। कोडमदे अपने रथ में बैठी हुई सादुल का भीषण पराक्रम देख रही थी। किस तरह सादुल शत्रुओं का गाजर-मूली की भांति सहार कर रहा है। किस तरह पृथ्वी माता नर-मुण्डों व रक्त धाराओं से अपना शृंगार कर रही है। रणभेरियों के तुमुल नाद से दिग्दिगन्त गूंज उठे हैं। अश्वों व कँटों की टापों के

रण क्षेत्र भर सा गया है।

साझ आकाश से उतरी तो युद्ध बंद हुआ। आहत सादुल अपने खेम में आया। कोडमदे ने उसकी आरती उतारी। चरण धूलि लेकर बोली मैं प्रभु से प्रार्थना करती रही हूँ कि मुझे आप जैसे वीर पति की पत्नी बार बार बनाना। मैं कहती हूँ कि ऐसा सुहाग क्षणिक भी हो तो भी अमर सुहाग है।"

कोडमदे और भारली ने कसूम्बे का प्रबन्ध किया। सादुल के घावों की मरहम पट्टी की। श्रांत सादुल के नेत्रों में नींद घुलने लगी। भारली खेमे के आगे पहरा लगा रही थी कि उसने सहसा कोडमदे को पुकारा। कोडमदे बाहर आयी। चारों ओर प्रगाढ़ शांति छायी हुई थी। शत्रुओं के खेमों में भी मशालें जल रही थीं। कभी-कभी कोई सियार बोल जाता था जिससे मौन डरावना हो जाता था। कोडमदे ने पूछा 'क्या बात है भारली ?

बाई सा अरडकमलजी कुँवर सा से मिलना चाहते हैं। वे हमारी विराम रेखा के उस पार खड़े हैं ?

कोडमदे क्षण भर के लिए भीतर गई। वापस आकर उसने कहा उन्हें ससम्मान यहाँ लाया जाय।

थोड़ी देर में अरडकमल सादुल के खेमे में था। उसका स्वागत सत्कार बहुत ही सम्मान से किया गया।

अरडकमल ने कहा मैं आपसे शांति और धर्म की बात करने आया हूँ। यह आप स्वयं जानते हैं कि राजकुमारी पर मेरा पहला अधिकार है। किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति की मंगेतर को ब्याह लाना उसका घोर अपमान करना है। मैं चाहता हूँ कि आप अब भी कोडमदे को हमें सौंप दें और व्यर्थ के सर्वनाश से बचिए।

आपका केवल यही कहना था तो फिर आपने व्यर्थ ही कष्ट किया। कोडमदे अब मेरी विवाहिता है पत्नी है शास्त्र-समाज के अनुसार यह अब मेरे सिवा किसी की नहीं हो सकती। जो मेरी है वह मैं

जीते जी किसी का भी नहीं दे सकता । राठौड़-कुल सूम ! मैं आपका अपमान नहीं चाहता हूँ पर आप रण भूमि में मेरे समक्ष मत आइएगा । मेरे समक्ष आकर आप जीवित नहीं लौटेंगे ।'

' यह तो युद्ध भूमि मे देखेंगे । अच्छा ! ज माता जी की ।"

अरडकमल लौट गया । शांति वाता भग हो गई । होनी भी थी क्योंकि कोई किसी से अवधानिक रूप से किसी की वस्तु को छीनना चाहे तो कौन छीनने देगा ।'

आज सूर्य रणवाद्यों का घोष करता हुआ ही उगा । शखनाद और तूर्यनाद से नर केसरी सादुल का व ग हिल्लोलित हो रहा था । धमनियों का रक्त उष्ण होकर मुद्ध मुद्ध चिल्ला रहा था ।

कोडमदे सोलह शृंगार करके अपने पति को विदा दे रही थी । आरती उतार कर उसने कहा, मैं रथ पर बैठी हुई आपका रण कौशल देखूंगी ।"

सादुल ने गर्ज कर कहा आज मेरे आक्रमण से स्वयं रण-देवता भयभीत हो जायेंगे ।

रणभेरी बजी !

अश्व पर आरूढ सादुल विकराल दानव की भांति शत्रुओं पर टूट पड़ा । शत्रु सेना त्राहि त्राहि करने लगी । उन्हें भ्रम होने लगा कि सादुल एक है या अनेक ! अरडकमल के पाँव उखडने लगे । उसी समय अरड कमल की सहायता के लिए एक और सेना आ गई । देखते देखते सादुल के अधिकांश सैनिक खेत रह गए । उसकी आशा टूटने लगी । वह रणक्षेत्र छोड़कर कोडमदे के पास आया । ललाट पर बहते हुए रक्त को पोंछकर बोला, कुँवराणी सा ! अब मैं आपसे अन्तिम विदा लेने आया हूँ । भगवान ने चाहा तो यहाँ फिर मिलेंगे नहीं तो अगले जन्म में ।'

कोडमदे ने उत्साह से कहा आप चिंता मत कीजिए । वीर की पत्नी जन्म-जन्मान्तर अपने पति का साथ नहीं छोड़ती है । हम यहाँ नहीं तो स्वर्ग में अवश्य मिलेंगे । आप अपने कर्तव्य पर डटे रहें ।"